RNI No. RAJHIN/2020/11458

वर्ष : 6 अंक : 9 सितंबर, 2026 मूल्य : 80 रु. पृष्ठ : 44

राजस्थान टुडे

Gen Alpha की दस्तक

Gen Z का आक्रोश

आक्रोश युवाओं का, सियासत किसकी?

पेज- 5

CELEBRATING 42 YEARS OF TRUST
THE LIQUID GOLD

ISO 22000 2018

स्वाद वो जो बना दे बात

मनभाती महक, लाजवाब स्वाद, भरपूर पौष्टिकता

सोना सिक्का®©

महंगा है पर खरा है!

स्वाद और सेहत से भरा है

42 वर्षों से शुद्धता के हर मापदंड पर खरा उतरा है, इसलिए बेस्ट है सोना सिक्का

सोना सिक्का रखता है ख्याल आपकी सेहत का आपके परिवार की खुशियों का इसलिए सोना सिक्का तेल के निर्माण में गुणवत्ता शुद्धता और सेहत से कोई समझौता नहीं किया जाता है।

परिवार की सेहत के लिए सोना सिक्का में व्यंजन बनायें, खुद खायें, सबकों खिलायें....!

मिलते-जुलते नाम और अशुद्ध ब्रांड से सावधान. आपके स्वास्थ्य से बढ़कर कुछ नहीं

SHAKUN

Shyam and Shyam Oils Pvt. Ltd. Jodhpur

Plot No. B 5,6,7 (A), 1st Phase, Basni Industrial Area, Jodhpur, (Raj.)

डिस्ट्रीब्यूटर बनने एवं डीलरशिप हेतु
टोल फ्री नं. पर सम्पर्क करें: 1800 313 3292

sonasikka.com | info@sonasikka.com | sonasikka
0291-2512333, 2512338 | Available on : amazon | Flipkart

राजस्थान टुडे

आपकी पत्रिका, आपकी बात

www.rajasthantoday.online

RNI No. RAJHIN/2020/11458

वर्ष 6, अंक 9, सितंबर 2026

प्रधान सम्पादक - दिनेश रामावत

प्रबंध सम्पादक - राकेश गांधी

राजनीतिक सम्पादक - सुरेश व्यास

कार्यकारी सम्पादक - अजय अस्थाना

सह सम्पादक - बलवंत राज मेहता

विशेष प्रतिनिधि

नई दिल्ली - राधा रमण

जयपुर - मणिमाला शर्मा

अजमेर - धर्मेंद्र प्रजापति

उदयपुर - मधुलिका सिंह

कोटा - अरविन्द गुप्ता

बीकानेर- राकेश आचार्य

पाली - चैनराज भाटी

सिरोही - गणपत सिंह

जालोर - तरुण गहलोत

बाड़मेर - धर्मसिंह भाटी

रेखाचित्र- राजेंद्र यादव

विज्ञापन प्रतिनिधि

जोधपुर - प्रवीण गिरी - 99280 26609

संपादकीय कार्यालय

बी-4, फोर्थ फ्लोर, एम.आर. हाईट्स महावीर कॉलोनी, भास्कर सर्किल, रातानाड़ा, जोधपुर - 342 011

व्हाट्सएप नंबर - 81078 00000

ई-मेल - rajasthantoday@gmail.com

सभी विवादों का निपटारा जोधपुर की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों और फोरमों में किया जाएगा।

राजस्थान टुडे में प्रकाशित आलेख लेखकों की राय है। इसे राजस्थान टुडे की राय नहीं समझा जाए। राजस्थान टुडे के मुद्रक, प्रकाशक और प्रधान सम्पादक इसके लिए जिम्मेदार नहीं होंगे। हमारी भावना किसी वर्ग या व्यक्ति को आहत करना नहीं है। विज्ञापनदाताओं के किसी भी दावे का उत्तरदायित्व राजस्थान टुडे का नहीं होगा।

मारवाड़ मीडिया प्लस के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक पूनम अस्थाना द्वारा बी-4, फोर्थ फ्लोर, महावीर कॉलोनी, रातानाड़ा, जोधपुर-342 011 से प्रकाशित और डी.बी. कॉर्प लिमिटेड, 10 जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर में मुद्रित। संपादक : अजय अस्थाना*
(*पी आर पी एक्ट के तहत उत्तरदायी)

अंदर विशेष

4 अपनी बात
भरोसे का चुनाव

नियमित कॉलम

08 बोल हरि बोल
12 बात बेलगाम
34 अभिव्यक्ति
42 ग्रहों की चाल

5 **आक्रोश युवाओं का, सियासत किसकी?**

9 **चमकते आंकड़े, बेचैन घर**

13 **सत्ता का नया कुरुक्षेत्र: स्मार्टफोन**

15 प्रदेश राजनीति...
सत्ता, संतुलन और दिल्ली दरबार

17 राजस्थान कांग्रेस...
जीत के सूत्रों की बिगड़ रही 'गणित'

19 मानसून सत्र...
संसद में संवाद की जगह शोर

21 जीवन प्रबंध...
कॉपीकैट नहीं, विवेकशील बनें

24 डब्बावाला मॉडल...
डब्बे में खाना नहीं, भरोसा चलता है

25 मोदी युग...
बारह वर्षों में कितना बदला भारत

27 भारत-चीन संबंध...
असली मुकाबला तकनीक व बाजार में

29 साइबर गुलामी...
विदेशी नौकरी का खतरनाक जाल

31 अजमेर चुनाव राजनीति
भाजपा-कांग्रेस को अपनों का डर

33 हिन्दी दिवस...
वृहत् सांस्कृतिक मनीषा का पर्याय है हिन्दी

35 खेलों में भारतीय चुनौती...
भारत कब बनेगा खेल महाशक्ति?

37 सिनेमाई संवेदना...
दिल की चौखट पर दस्तक

39 भारत-फ्रांस सांस्कृतिक सेतु...
फ्रांस में भारत का शिखर

अपनी बात

भरोसे का चुनाव

राजनीति में हर पीढ़ी की एक परीक्षा होती है। कभी यह परीक्षा जाति और क्षेत्र के समीकरणों से गुजरती थी, कभी आर्थिक सुधारों के वादों से। 2029 में यह परीक्षा एक नए रूप में सामने है — क्या कोई राजनीतिक दल उस पीढ़ी का भरोसा जीत सकता है जो हर दावे को अपने फोन पर बैठे-बैठे परख लेती है, हर नारे की तुलना दूसरे स्रोतों से करती है? नेता की बात सुनकर तालियां बजाना और अगले ही पल उसी बात पर सवाल उठाने वाला वीडियो देखना, इस पीढ़ी के लिए विरोधाभास नहीं, रोजमर्रा की आदत है।

Gen Z को समझने की कोशिश में सबसे बड़ी भूल यही होगी कि उसे एक जैसा मान लिया जाए। यह पीढ़ी न पूरी तरह भाजपा के साथ है, न पूरी तरह कांग्रेस के साथ। किसी छोटे शहर का युवा सरकारी नौकरी को स्थिरता का सबसे भरोसेमंद रास्ता मानता है, जबकि महानगर का युवा स्टार्टअप और निजी क्षेत्र में भविष्य देखता है। कोई जाति और स्थानीय समीकरणों से प्रभावित है, कोई राष्ट्रवाद से, कोई महंगाई से। यह वह पीढ़ी है जो एक ही सांस में देश की उपलब्धि पर गर्व भी करती है और अपनी बेरोजगारी पर सवाल भी उठाती है। यही दोहरापन कोई विरोधाभास नहीं, बल्कि इस पीढ़ी की सबसे बड़ी सच्चाई है — इसीलिए 'Gen Z इस दल के साथ है' जैसे निष्कर्ष हमेशा अधूरे साबित होंगे।

भाजपा के पास आज बढ़त जरूर है। संगठन की पहुंच, सोशल मीडिया की मौजूदगी और नरेंद्र मोदी की व्यक्तिगत लोकप्रियता — यह तीनों मिलकर एक मजबूत आधार बनाते हैं। पार्टी ने हाल में भाषा भी बदली है, अधिक अनौपचारिक संवाद अपनाया है। लेकिन बढ़त और भरोसा एक बात नहीं है। एक युवा नेता की रील देखकर तालियां बजा सकता है, लेकिन उसी रात नौकरी की चिंता में भी सो सकता है। पार्टी के लिए खतरा यह नहीं कि वह युवा अचानक विपक्ष के साथ चला जाए, बल्कि यह कि वह धीरे-धीरे उदासीन हो जाए। उदासीन मतदाता पाला नहीं बदलता, बस घर बैठ जाता है — और यह उदासीनता किसी भी सत्तारूढ़ दल के लिए हार से कम खतरनाक नहीं होती।

दूसरी तरफ कांग्रेस के पास मुद्दे हैं — रोजगार, पेपर लीक, प्रतियोगी परीक्षाओं की अनिश्चितता, सरकारी भर्तियों में देरी। यह वे मुद्दे हैं जिनसे आज का हर दूसरा युवा सीधे जुड़ा है, और राहुल गांधी का छात्रों-युवाओं से बढ़ता संवाद इसी रणनीति का हिस्सा दिखता है। लेकिन मुद्दा उठाना और उस पर भरोसा जीतना, इन दोनों के बीच लंबा फासला है। कोई छात्र सभा में तालियां बजा सकता है, वीडियो शेयर कर सकता है, फिर भी मतदान के दिन किसी क्षेत्रीय दल या नए विकल्प की तरफ चला जाए, तो हैरानी नहीं होनी चाहिए। असंतोष अपने आप वोट में नहीं बदलता — उसे भरोसे का पुल चाहिए।

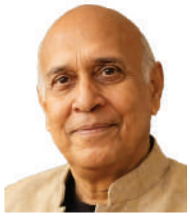

दिनेश रामावत

प्रधान सम्पादक

2029 का चुनाव सीटों की लड़ाई से पहले भरोसे की लड़ाई है। भाजपा और कांग्रेस दोनों Gen Z को साधने में जुटे हैं, लेकिन यह पीढ़ी नारों से नहीं, अपने जीवन में आए बदलाव से राजनीति को परखेगी। असली सवाल विचारधारा का नहीं, विश्वसनीयता का होगा।

यहीं से एक बड़ा सवाल उठता है, जो दोनों दलों के लिए समान है — क्या राजनीति सचमुच युवाओं को भागीदार बनाना चाहती है, या सिर्फ चुनावी मौसम का 'मुखौटा' बनाकर इस्तेमाल करना चाहती है? जिस पीढ़ी ने आंदोलन, पेपर लीक और नीति-परिवर्तन जैसी घटनाएं वास्तविक समय में देखी हैं, वह दिखावटी भागीदारी को आसानी से पहचान लेती है। संगठन में जगह, निर्णय-प्रक्रिया में भूमिका — यह मांगें अब नारों तक सीमित नहीं रह सकतीं।

डिजिटल राजनीति की भी सीमा है। मोबाइल स्क्रीन की राजनीति और जमीनी अनुभव की राजनीति में फासला बना रहता है। कोई रील लाखों बार देखी जा सकती है, लेकिन अंतिम फैसला परिवार, दोस्तों और अपने अनुभव से बनता है। डिजिटल पहुंच मतदाता तक ले जा सकती है, टिकाए रखने का काम भरोसा ही करता है।

और अंततः यह सब आकर टिकता है रोजगार पर। रोजगार केवल आर्थिक आंकड़ा नहीं, बल्कि आत्मनिर्भरता, विवाह, घर, शहर बदलने और भविष्य की योजना — इन सबका आधार है। 2029 का युवा आज के भाषणों से नहीं, बल्कि अगले तीन वर्षों में अपने जीवन में आए वास्तविक बदलाव से राजनीति को परखेगा। नौकरी मिली या नहीं, भर्ती समय पर हुई या अटकी रही, शिक्षा से रोजगार तक का रास्ता आसान हुआ या और उलझा — यही उसका असली मापदंड होगा।

इसलिए यह मान लेना जल्दबाजी होगी कि Gen Z किसी एक दल का स्थायी वोट बैंक बनेगा। यह पीढ़ी निर्णायक जरूर बन सकती है, खासकर उन सीटों पर जहां मुकाबला करीबी होगा — क्योंकि राष्ट्रीय स्तर पर मामूली दिखने वाला युवा-स्विंग सीमांत सीटों पर बड़ा उलटफेर कर सकता है। लेकिन इस पीढ़ी की निष्ठा किसी झंडे से नहीं, अनुभव से बंधी होगी।

आखिरकार सवाल न भाजपा का बचा है, न कांग्रेस का — सवाल यह है कि कौन सा दल एक युवा को यह ईमानदार जवाब दे पाता है कि उसने उसके लिए वास्तव में क्या किया, और वोट देने पर आगे क्या बदलेगा। जिस दिन यह जवाब स्पष्ट, विश्वसनीय और प्रमाणित होगा, उसी दिन असली राजनीतिक बढ़त तय होगी। बाकी सब — रील, नारे, अभियान और चुनावी वादे — उसके बाद आते हैं, पहले नहीं।

आक्रोश युवाओं का, सियासत किसकी?

मधुलिका सिंह,
वरिष्ठ पत्रकार

लखनऊ, अलवर, दिल्ली, झारखंड और अब पटना की घटनाएं बता रही हैं कि युवा अब सवाल पूछ रहा है। उससे भी आगे, स्कूलों के बच्चे भी अपनी बुनियादी जरूरतों के लिए सड़क पर उतर रहे हैं। यह आक्रोश राजनीति का मुद्दा बन सकता है, लेकिन इसकी दिशा युवाओं को ही तय करनी होगी।

किसी देश की राजनीति में बदलाव हमेशा चुनाव के नतीजों से दिखाई दे, यह जरूरी नहीं है। कई बार बदलाव उससे पहले ही दस्तक देने लगता है। सड़कों पर बैठे युवाओं में, विश्वविद्यालयों में उठ रहे सवालों में, सोशल मीडिया पर चल रही बहसों में और उन छोटी-छोटी घटनाओं में, जिन्हें हम अक्सर स्थानीय मामला समझकर आगे बढ़ जाते हैं।

आज भारत में ऐसी ही कुछ घटनाओं को ध्यान से देखने की जरूरत है। युवा अब केवल यह नहीं पूछ रहा कि अगली बार वोट किसे देना है। वह उससे पहले के सवाल पूछ रहा है कि परीक्षा ठीक से होगी या नहीं, भर्ती समय पर होगी या नहीं, मेहनत का परिणाम उसके हाथ में होगा या किसी और के फैसले में। सबसे बड़ा सवाल यह है कि क्या व्यवस्था भरोसे लायक है?

लेकिन अगस्त 2026 की तस्वीर में एक नया और ज्यादा महत्वपूर्ण बदलाव दिखाई दे रहा है। सवाल पूछने वाली पीढ़ी अब केवल Gen Z नहीं है। Gen Alpha, यानी वे बच्चे जो अभी मतदान की उम्र तक भी नहीं पहुंचे हैं, वे भी स्कूल, शिक्षक, सड़क, पानी, भोजन और बुनियादी सुविधाओं को लेकर आवाज उठाने लगे हैं।

यही वह बिंदु है जहां यह कहानी केवल युवा आक्रोश की नहीं रह जाती। यह आने वाली पीढ़ी के नागरिक-बोध की कहानी बन जाती है।

जब स्कूल की बेटियां सवाल पूछने लगीं

लखनऊ की घटना को ही देखिए। 17 अगस्त 2026 को जयप्रकाश नारायण सर्वोदय विद्यालय की छात्राएं शिक्षकों की कमी और छात्रावास की व्यवस्थाओं को लेकर स्कूल से बाहर निकलीं और सड़क पर प्रदर्शन किया। उनकी शिकायत सीधी थी कि शिक्षक नहीं हैं तो पढ़ाई और परिणाम कैसे आएगा? अलवर में भी अगस्त 2026 में थानागाजी क्षेत्र के एक राजकीय विद्यालय की छात्राओं ने जर्जर भवन, शिक्षकों की कमी और सड़क की समस्या को लेकर आवाज उठाई। प्रशासन को हस्तक्षेप करना पड़ा। इन घटनाओं में एक गहरी समानता है। ये बच्चे राजनीति की भाषा में नहीं, अपने रोजमर्रा के अनुभव की भाषा में सवाल कर रहे हैं। उनके लिए विकास कोई चुनावी भाषण नहीं है। विकास का अर्थ है कि स्कूल की छत ठीक हो, शिक्षक हों, सड़क हो, पानी मिले और पढ़ाई हो। और अब यह सवाल केवल राजस्थान या उत्तरप्रदेश तक सीमित नहीं है।

Gen Alpha ने भी खोल दिया मोर्चा

अगस्त में उत्तरप्रदेश के महोबा में स्कूली बच्चों ने जलभराव और खराब सड़क के विरोध में झांसी-मिर्जापुर हाईवे तक जाम कर दिया। हमीरपुर में बच्चे कई किलोमीटर चलकर कलेक्ट्रेट पहुंचे और गांवों को जोड़ने वाली सड़क की मांग उठाई। उन्नाव में बच्चों ने शिक्षकों की कमी और स्कूल में मिलने वाले भोजन की गुणवत्ता को लेकर प्रदर्शन किया।

मध्यप्रदेश में तो Gen Alpha के विरोध प्रदर्शनों की एक श्रृंखला दिखाई दी। विदिशा के सिरोंज में छात्राएं बस किराया बढ़ाने के विरोध में सड़क पर उतरीं। उज्जैन में स्कूलों से जुड़े फैसलों को लेकर बच्चों ने प्रशासन के सामने अपनी बात रखी। इन प्रदर्शनों की खास बात यह थी कि इनके पीछे पारंपरिक छात्र संगठन या राजनीतिक दल नहीं थे। स्कूल के बच्चे खुद सामने आए।

महाराष्ट्र के धाराशिव में कक्षा दस के विद्यार्थियों ने वर्षों से खाली पड़े शिक्षकों के पदों को लेकर प्रशासनिक कार्यालय के बाहर धरना दिया। नासिक में बच्चों ने खराब सड़कों की स्थिति पर अपनी तरह से रिपोर्ट तैयार कर सवाल उठाया। राजस्थान में भी स्कूली बच्चों और छात्राओं की आवाज बुनियादी सुविधाओं को लेकर सामने आई। उपलब्ध रिपोर्टों के अनुसार उत्तरप्रदेश, बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र में Gen Alpha से जुड़े ऐसे प्रदर्शन सामने आए हैं। यह सिर्फ इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि बच्चे सड़क पर उतर आए। महत्वपूर्ण यह है कि उन्होंने अपने अधिकार और अपनी जरूरत के बीच संबंध समझना शुरू कर दिया है।

सरकार के पास अब जवाब भी होना चाहिए

उत्तरप्रदेश की एक ताजा घोषणा इस बदलती तस्वीर का दूसरा पहलू दिखाती है। राज्य सरकार ने 3,126 परिषदीय प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालयों के पुनर्निर्माण और मरम्मत के लिए कुल 604 करोड़ रुपये का प्रावधान किया है। इनमें 2,243 प्राथमिक विद्यालयों के लिए 344.52 करोड़ और 883 उच्च प्राथमिक विद्यालयों के लिए 259.95 करोड़ रुपये निर्धारित हैं। बेसिक शिक्षा विभाग ने पहली किश्त के रूप में 302 करोड़ रुपये जारी भी कर दिए हैं। इसे केवल सरकारी उपलब्धि के रूप में देखना अधूरा होगा। इसे बच्चों की शिकायतों के संदर्भ में भी देखना चाहिए।

क्योंकि लोकतंत्र की असली परीक्षा यही है कि किसी बच्चे को स्कूल की छत, शिक्षक, सड़क या भोजन के लिए सड़क पर क्यों उतरना पड़ा? और अगर वह उतरता है तो प्रशासन कितनी जल्दी उसकी बात सुनता है? सरकारें योजनाएं बनाती हैं, बजट आवंटित करती हैं और परियोजनाएं घोषित करती हैं। लेकिन नागरिक उन योजनाओं का परिणाम अपने अनुभव से मापता है। Gen Alpha शायद इसी अनुभव से राजनीति को समझना शुरू कर रहा है।

परीक्षा अब सिर्फ परीक्षा नहीं

- Gen Z के लिए प्रतियोगी परीक्षा केवल दो-तीन घंटे का प्रश्नपत्र नहीं है। उसके पीछे कई साल की मेहनत, परिवार की उम्मीद, कोचिंग का खर्च और अक्सर घर से दूर किसी शहर में रहना जुड़ा होता है। इसलिए जब परीक्षा में गड़बड़ी, पेपर लीक या भर्ती में अनियमितता की बात सामने आती है तो युवा इसे केवल प्रशासनिक समस्या नहीं, अपने साथ हुए धोखे की तरह देखता है।
- पटना में अगस्त 2026 का छात्र आंदोलन इसका ताजा उदाहरण है। शिक्षक भर्ती परीक्षा TRE-4 के विज्ञापन में देरी, प्रतियोगी परीक्षाओं में पारदर्शिता और भर्ती प्रक्रिया से जुड़े सवालों को लेकर छात्रों ने गर्दनीबाग में आंदोलन तेज किया। छात्रों ने एकल परीक्षा प्रणाली और नेगेटिव मार्किंग समाप्त करने जैसी मांगें भी उठाईं।
- इससे पहले NEET से जुड़े विवाद और पुलिस कार्रवाई के खिलाफ भी पटना में छात्रों ने प्रदर्शन किया था। अगस्त की शुरुआत में सैकड़ों छात्रों और युवा कार्यकर्ताओं ने मुख्यमंत्री आवास की ओर मार्च किया, जिसे पुलिस ने पानी की बौछारों से रोक दिया।
- 19 अगस्त को छात्र और युवा मुद्दों को लेकर आरजेडी के मार्च के दौरान तेजस्वी यादव सहित नेताओं को हिरासत में लिया गया। 22 अगस्त को तेजस्वी यादव ने फिर छात्र आंदोलन का समर्थन करते हुए पेपर लीक रोकने, समय पर परीक्षाएं कराने, रोजगार बढ़ाने और पारदर्शी भर्ती प्रक्रिया की मांग की।
- यहां एक बात साफ है कि पटना का आक्रोश केवल परीक्षा का नहीं है। यह उस पीढ़ी की बेचैनी है जिसे लगता है कि उसकी मेहनत और व्यवस्था के बीच भरोसे की कड़ी कमजोर हो रही है।

Gen Z से Gen Alpha तक—एक ही सवाल

- यहीं पर Gen Z और Gen Alpha की आवाजें एक-दूसरे से जुड़ती हैं। एक तरफ पटना का युवा पूछ रहा है—भर्ती कब होगी, परीक्षा निष्पक्ष होगी या नहीं? दूसरी तरफ महोबा का बच्चा पूछ रहा है—स्कूल जाने की सड़क कब बनेगी?
- मध्यप्रदेश की छात्रा पूछ रही है—स्कूल बस का किराया इतना क्यों बढ़ा? महाराष्ट्र का विद्यार्थी पूछ रहा है—शिक्षक कब आएंगे? राजस्थान की छात्राएं पूछ रही हैं—जर्जर स्कूल भवन में पढ़ाई कैसे होगी? लखनऊ की छात्राएं पूछ रही हैं—शिक्षक और छात्रावास की व्यवस्था कब सुधरेगी?
- उम्र अलग है। सवालों का स्तर अलग है। लेकिन मूल चिंता एक है कि व्यवस्था मेरे भविष्य को कितनी गंभीरता से लेती है? यही इस पूरे घटनाक्रम का सबसे बड़ा संकेत है।

छात्रों के गुस्से को भुनाने की कोशिश

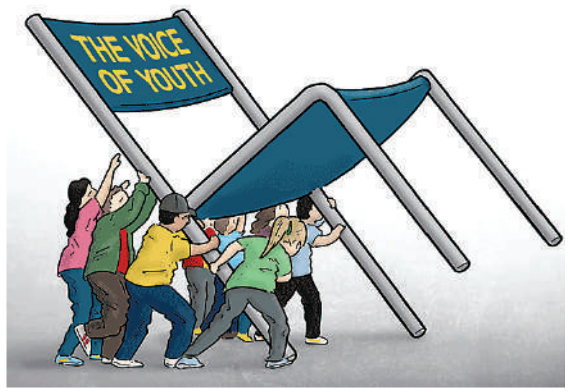

जब युवा सड़क पर आता है तो राजनीति उससे दूर नहीं रह सकती। पटना में विपक्षी दल छात्र आंदोलन के समर्थन में सामने आए। महाराष्ट्र में Gen Z प्रदर्शनों के बाद राजनीतिक दलों के युवा संगठनों ने कॉलेज परिसरों में अपनी सक्रियता बढ़ाई और सदस्यता अभियान तेज किए।

यही राजनीति का स्वाभाविक चरित्र है। जहां असंतोष होगा, वहां राजनीतिक दल अपनी जगह बनाने की कोशिश करेंगे। लेकिन यहां युवाओं को सबसे ज्यादा सावधान रहने की जरूरत है।

आंदोलन वास्तविक हो सकता है और राजनीति उसके आसपास हो सकती है। दोनों बातें एक साथ सच हो सकती हैं। इसलिए किसी नेता ने समर्थन किया है तो उसका स्वागत कीजिए, लेकिन अपनी आवाज उसके हवाले मत कीजिए। किसी दल ने रोजगार का वादा किया है तो पूछिए कि कितने रोजगार, कब और कैसे?

किसी सरकार ने स्कूलों के लिए 604 करोड़ रुपये दिए हैं तो अगला सवाल होना चाहिए कि कितने स्कूलों का काम पूरा हुआ, गुणवत्ता कैसी रही और बच्चों को इसका लाभ कब मिलेगा? यही सवाल लोकतंत्र को नारे से नीति की तरफ ले जाता है।

झारखंड ने दिखाया दूसरा पहलू

झारखंड का आंदोलन इस कहानी का दूसरा पहलू बताता है। भर्ती परीक्षाओं में कथित अनियमितताओं को लेकर छात्रों का आंदोलन चला। सरकार ने कुछ भर्ती परीक्षाओं और प्रक्रियाओं को रद्द करने तथा मामलों की जांच कराने के फैसले किए।

लेकिन इसके बाद उन अभ्यर्थियों की चिंता भी सामने आई जिन्होंने ईमानदारी से परीक्षा पास की थी। अगर पूरी प्रक्रिया रद्द होती है तो उनकी मेहनत का क्या होगा?

20 अगस्त को झारखंड हाईकोर्ट ने 11वीं से 13वीं जेपीएससी परीक्षा और उससे जुड़े नियुक्ति आदेशों को रद्द करने के सरकारी फैसले पर रोक लगा दी। इससे चयनित अभ्यर्थियों को राहत मिली।

यहां आंदोलन की मांग और निर्दोष अभ्यर्थियों के अधिकार—दोनों सामने आते हैं। यही लोकतंत्र की जटिलता है। सड़क सवाल पूछती है, सरकार फैसला करती है और अंततः न्यायपालिका यह देखती है कि फैसला न्यायपूर्ण है या नहीं।

असली बेचैनी भरोसे की है

इन घटनाओं को थोड़ा पीछे हटकर देखें तो तस्वीर साफ होती है। युवा केवल नौकरी नहीं, निष्पक्ष अवसर मांग रहा है।

Gen Alpha केवल बेहतर स्कूल नहीं, यह भरोसा मांग रहा है कि उसकी समस्या छोटी समझकर टाल नहीं दी जाएगी। युवा बेरोजगारी से परेशान है। बच्चा खराब सड़क से परेशान है। छात्र शिक्षक की कमी से परेशान है। अभ्यर्थी परीक्षा की अनिश्चितता से परेशान है।

इन सभी परेशानियों के बीच एक शब्द बार-बार सामने आता है—भरोसा। जब बार-बार परीक्षा टलती है, भर्ती अटकती है, शिक्षक नहीं आते या स्कूल की बुनियादी सुविधा के लिए बच्चे सड़क पर उतरते हैं, तब समस्या केवल सुविधा की नहीं रहती। व्यवस्था की विश्वसनीयता पर सवाल उठता है।

सोशल मीडिया ने इस बदलाव को और तेज कर दिया है। पहले किसी विद्यार्थी को अपनी बात बड़े मंच तक पहुंचाने के लिए संगठन या अखबार चाहिए होता था। आज उसके हाथ में मोबाइल है। कुछ घंटों में स्थानीय समस्या राष्ट्रीय मुद्दा बन सकती है।

यह ताकत है, लेकिन जिम्मेदारी भी है। क्योंकि सोशल मीडिया पर सच जितनी तेजी से फैलता है, गलत सूचना भी उतनी ही तेजी से फैलती है। इसलिए हर वायरल पोस्ट से पहले सवाल होना चाहिए कि स्रोत क्या है? प्रमाण क्या है? और फायदा किसे हो रहा है?

सरकारों के लिए भी संदेश

सरकारों को भी इस बदलती मनःस्थिति को समझना होगा। हर आंदोलन को साजिश बताकर खारिज करना आसान है। लेकिन शिकायत सही है तो फर्क नहीं पड़ता कि उसे पहले किसने उठाया।अगर गड़बड़ी हुई है तो जवाब देना होगा। अगर आरोप गलत हैं तो प्रमाण के साथ खंडन करना होगा।

और आंदोलनकारियों को भी समझना होगा कि हर फैसला गलत नीयत से नहीं होता। आंदोलन की ताकत केवल सड़क पर नहीं, संवाद में भी होती है। विशेष रूप से Gen Alpha के मामले में सरकारों और प्रशासन को अलग संवेदनशीलता की जरूरत है। जो बच्चे अभी वोट भी नहीं दे सकते, यदि वे स्कूल की बुनियादी सुविधाओं के लिए सड़क पर उतर रहे हैं तो यह प्रशासन के लिए चेतावनी भी है और अवसर भी। उन्हें केवल शांत कराने की नहीं, सुनने की जरूरत है।

आगे क्या?

युवा राजनीति से दूर नहीं रह सकता। शिक्षा, रोजगार, भर्ती, महंगाई और सार्वजनिक सुविधाओं से जुड़े फैसले राजनीति में ही तय होते हैं।

इसलिए राजनीति से दूरी समाधान नहीं है। लेकिन राजनीतिक दलों से अपनी स्वतंत्रता बचाए रखना जरूरी है। किसी दल को वोट दीजिए। किसी नेता को पसंद कीजिए। लेकिन सवाल भी पूछिए।अगर युवा अपने पसंदीदा नेता से सवाल नहीं करता और केवल दूसरे दल से सवाल करता है तो वह नागरिक से समर्थक बन जाता है। लोकतंत्र को समर्थक नहीं, जागरूक नागरिक चाहिए।

GEN Z और GEN ALPHA के सामने सबसे बड़ी चुनौती यही है। भीड़ जुटाना आसान है। जिम्मेदार नागरिक बनना कठिन। नारे लगाना आसान है। तथ्यों को समझना कठिन।किसी नेता के पीछे चलना आसान है। अपने विवेक के साथ खड़ा रहना कठिन।लेकिन लोकतंत्र की असली ताकत इसी कठिन रास्ते में है।

तो क्या यह पीढ़ी राजनीति बदल देगी?

शायद। लेकिन केवल इसलिए नहीं कि वह युवा है या उसके हाथ में सोशल मीडिया है।बदलाव तब आएगा जब वह राजनीतिक दलों से सवाल पूछने के साथ अपने विवेक की रक्षा करेगी। जब रोजगार का वादा करने वाले से पूछा जाएगा कि कितने और कब? जब सरकार स्कूल सुधारने के लिए 604 करोड़ रुपये देगी तो पूछा जाएगा कि काम जमीन पर कब दिखाई देगा? जब किसी परीक्षा की निष्पक्षता पर सवाल उठेगा तो पूछा जाएगा कि जवाबदेही किसकी है? और सबसे महत्वपूर्ण—जब सत्ता में कोई भी आए, उससे वही सवाल पूछे जाएंगे जो आज पूछे जा रहे हैं।

लखनऊ की छात्राओं से लेकर अलवर की बेटियों तक, पटना के प्रतियोगी अभ्यर्थियों से लेकर झारखंड के नौकरी चाहने वालों तक और मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र तथा उत्तरप्रदेश के स्कूलों से सड़क पर उतरे GEN ALPHA बच्चों तक—इन आवाजों में एक बात समान है।

युवा अब सवाल पूछ रहा है।यह लोकतंत्र के लिए अच्छी खबर है। लेकिन अगली परीक्षा युवाओं की है कि क्या वे अपने सवालों को नीति में बदल पाएंगे? क्या वे राजनीतिक समर्थन और राजनीतिक नियंत्रण के बीच फर्क कर पाएंगे? क्या वे किसी दल का समर्थन करते हुए भी उससे सवाल पूछ सकेंगे?अगर इसका जवाब हां है तो यह पीढ़ी केवल राजनीति का खेल नहीं बदलेगी, वह उसके नियम बदलने की शुरुआत करेगी।

लोकतंत्र में सबसे शक्तिशाली युवा वह नहीं जो सबसे ज्यादा शोर करता है। सबसे शक्तिशाली वह है जो सवाल पूछता है, तथ्य जांचता है और किसी के कहने पर अपनी राय बदलने से पहले सोचता है।

> *आक्रोश युवाओं का है। भविष्य युवाओं का है। अब राजनीति का एजेंडा भी युवाओं के सवालों से तय होना चाहिए। तभी Gen Z से Gen Alpha तक की यह बेचैनी केवल विरोध की आवाज नहीं रहेगी, बल्कि भारतीय लोकतंत्र के अगले अध्याय की शुरुआत बनेगी।*

वैकेंसी देखकर बेरोजगार GenZ किंकर्तव्यविमूढ़

हरीश मलिक,
वरिष्ठ व्यंग्यकार

एक बहुराज्यीय कंपनी ने मार्केटिंग टीम में कुछ नई नियुक्तियों का इश्तहार दिया। योग्यता देखकर बेरोजगारों की भीड़ थोड़ी चकराई। इसमें लिखा था कि उम्मीदवार स्नातक होना चाहिए। मार्केटिंग का अच्छा अनुभव और किसी एक विशेष राजनीतिक दल का समर्थक होना बेहद अनिवार्य है। एक GenZ आवेदक ने सीधे ही कंपनी के मानव संसाधन विभाग से पूछ लिया- "स्नातक तो ठीक है, लेकिन उस विशेष राजनीतिक दल का समर्थक होने की डिग्री कहां से मिलेगी? और यह नौकरी मार्केटिंग की है या चुनाव लड़वाना है?" अधिकारी ने उसे मुस्कुराकर ऐसे देखा जैसे वह बाजार में आकर पूछ रहा हो कि यहां माल भी बिकता है या केवल नारे! उसने कहा- "बहुत उत्साहित और नए युवा हो, इसलिए सवाल पूछ रहे हो। हमें वास्तव में सेल्समैन ही चाहिए। ऐसा सेल्समैन जो माल देखकर नहीं, मालिक को देखकर और उसकी तारीफ कर-करके माल बेच सके।

एक तो बेरोजगार और उस पर GenZ ऐसा जवाब सुनकर इतना किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया कि उसका चेहरा साफ-साफ इसकी चुगली भी करने लगा। उसकी हालत देख अधिकारी को तरस आया। उसे समझाते हुए बोला कि दरअसल, हमारा प्रोडक्ट लोकतांत्रिक बाजार के टेस्ट में 99 बार फेल हो चुका है। हमें ऐसे सेल्समैन चाहिए, जिनमें यह काबलियत हो कि प्रोडक्ट में चाहे दम न हो, प्रोडक्ट चाहे प्रतिद्वंद्वी से बेहद कमजोर हो, फिर भी सेल्समैन पूरी आस्था, विश्वास और भरपूर ऊर्जा के साथ उसकी तारीफों के पुल बांध सके। हमें ऐसे ही समर्पित सेल्समैन चाहिए जो हमारे साधारण प्रोडक्ट को ऐतिहासिक और 'भूतो न भविष्यति' बताकर बेच सकें। हमें ऐसे भी सेल्समैन चाहिए जो ढाई दशक से सफलतापूर्वक चल रहे हमारे प्रतिद्वंद्वी के प्रोडक्ट को खराब बताने के नए-नए तर्क, नैरेटिव और नारे गढ़ सकें।

कंपनी के अधिकारी ने यह भी बताया कि अभी कुछ समय पहले हमने जो नए सेल्समैन भर्ती किए हैं, वे हमारे अति साधारण उत्पाद के लिए इतना अधिक कॉन्फिडेंस से झूठ बोलने लगे हैं कि लोगों को कभी-कभी हमारे प्रतिस्पर्धी के उच्चस्तरीय प्रोडक्ट में तक कमियां नजर आने लग जाती हैं। कभी-कभी को खुद हम भी कन्फ्यूज हो जाते हैं। युवक ने हिम्मत कर पूछ लिया कि अगर कोई ग्राहक कहे कि भाई, मैंने इस्तेमाल किया है। आपका तो उत्पाद ही सही नहीं है। अधिकारी मुस्कुराया, "तब तुम्हें ग्राहक के अनुभव, नजरिए और सोच पर सवाल उठाना है। फिर भी न माने तो उसे प्रतिद्वंद्वी से मिला हुआ या पक्षपाती घोषित कर देना है। दरअसल, अच्छे माल को बेचने के लिए तो विचारधारा ही काफी है, लेकिन खराब माल को महान साबित करने के लिए महान सैल्समैन चाहिए।

युवक ने आखिरी सवाल दागा कि अगर ग्राहक समझदार निकला तो क्या करेंगे? अधिकारी ने पहली बार गहरी सांस ली और बोला कि समझदार ग्राहक से डरने की जरूरत नहीं है। लोकतंत्र में ग्राहक बहुत महत्वपूर्ण होता है। अधिकारी ने फाइल बंद करते हुए कहा कि इतना महत्वपूर्ण कि हर पांच साल में उसे फिर से समझाया जाता है कि बाजार का सबसे सफल और बिकाऊ प्रोडक्ट कौनसा है? युवक ने नौकरी का फॉर्म भर दिया।

देशभक्ति का शॉर्ट-कट दो अंतरे!

देश की सबसे पुरानी पार्टी के लिए देशभक्ति भी 'शॉर्ट फॉर्म' जैसी हो गई लगती है। दरअसल, उसे लगता है कि संसद में कानून बनने से राष्ट्रगीत तुष्टिकरण वाली राजनीति से बड़ा हो गया है। सो परंपरा की लकीर पीटते हुए वह अपनी पुरानी कैंची निकाल लाई। इससे दो अंतरे देश के लिए काट लिए और बाकी को शायद वोट-बैंक के लिए छोड़ दिया। बड़े महानुभावों ने सर्व सम्मति से अपना मन्तव्य छोटों पर मढ़ा और तय किया कि वंदे मातरम् के दो अंतरे गाइए, औपचारिकता पूरी कीजिए और आगे बढ़ जाइए। इससे ऐसा लगा मानो इस पार्टी के यहां अब देशभक्ति भी बहुमत से नहीं, वोट-बैंक की सहमति से तय होती है। यह कमाल ही है कि देश की सबसे बड़ी पंचायत के कानून पर भी यह पार्टी अपनी पुरानी राजनीतिक लकीर से एक इंच भी हटने को तैयार नहीं हुई। इससे क्या ये साबित होता है कि राष्ट्रगीत वंदे मातरम् भी वोट-बैंक के तराजू पर तौला जा सकता है?

चमकते आंकड़े, बेचैन घर

डॉ. त्रिलोक शर्मा,
लेखक, प्रबंधन शिक्षाविद्

भारत बढ़ रहा है, भारतीय कितने बढ़ रहे हैं? जीडीपी की तेज़ रफ़्तार के बीच आम आदमी की आय, नौकरी और भविष्य के भरोसे की पड़ताल

'आंकड़े तस्वीर दिखाते हैं, पूरी कहानी समझने के लिए घर तक जाना पड़ता है।'

बात शुरू करता हूं एक चेहरे से।

प्रतापगढ़ जिले के छोटे-से गांव चित्तोड़िया के ललित से मेरी मुलाकात हुई थी। ललित के हाथ में स्मार्टफोन है, घर तक पक्की सड़क आ गई है, बैंक खाते में योजनाओं का पैसा सीधे पहुंचता है और उसका छोटा बेटा शहर के कॉलेज में पढ़ रहा है। पंद्रह बरस पहले के ललित से आज का ललित कहीं बेहतर है, इसमें कोई शक नहीं। पर उसी ललित का बड़ा बेटा ग्रेजुएशन के बाद दो साल से नौकरी ढूंढ़ रहा है। महीना पूरा होने से पहले घर का बजट डगमगा जाता है और भविष्य की एक अनकही चिंता दीवारों पर चुपचाप टंगी रहती है। ललित की यही दोहरी जिंदगी, मेरी नजर में, आज के भारत की सबसे सच्ची तस्वीर है।

मुद्रा योजना पर आंकड़े जुटाते हुए मेरी मुलाकात भीलवाड़ा की निर्मला लखारा से हुई। पांचवीं पास निर्मला के पति घर पर हाथ से चूड़ियां बनाने का जॉब-वर्क करते थे, लेकिन सीजन बीतते ही काम ठप हो जाता और घर खाली हाथ रह जाता। निर्मला ने ठान लिया कि वह पति का सहारा बनेगी। चूड़ी-बाजार की समझ उसे थी और यह भी पता था कि ग्राहक अब सस्ती, तैयार डिजाइन वाली चूड़ियां ज्यादा पसंद करते हैं। सड़क की ओर खुलते अपने घर के निचले हिस्से को उसने दुकान बनाने की सोची। इसके लिए पूंजी जुटाने को पड़ोसियों की सलाह पर निर्मला बैंक पहुंची, जहां उसे प्रधानमंत्री मुद्रा योजना की 'शिशु' श्रेणी में 50,000 रुपए का ऋण मिला। उसी पूंजी से चूड़ियां, लेथ मशीन और जरूरी सामान आया और उसकी अपनी दुकान चल पड़ी। आज निर्मला रोज 500-600 रुपए की बिक्री और 15-20 ग्राहक संभालती है। पति भी हाथ बंटाते हैं। घर की गाड़ी अब पटरी पर है।

ललित का बेटा और निर्मला ये दोनों एक ही भारत के दो सिरे हैं। एक जगह पढ़े-लिखे हाथों के लिए अवसर की तलाश अधूरी है, दूसरी जगह एक छोटा-सा सहारा, महज पचास हजार रुपये, एक परिवार की दिशा बदल देता है।

असली सवाल यही है कि तराजू का कौन-सा पलड़ा भारी हो रहा है, और किसके लिए? भारत की अर्थव्यवस्था मजबूत रफ्तार से बढ़ रही है। राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के नवीनतम प्रोविज़नल अनुमान के मुताबिक वित्त वर्ष 2025-26 में वास्तविक जीडीपी वृद्धि 7.7 प्रतिशत रही और जनवरी-मार्च की चौथी तिमाही में यह 7.8 प्रतिशत रही। पूंजी निर्माण और निजी खपत दोनों में भी मजबूत वृद्धि दर्ज हुई।

मेरा सवाल दूसरा है, और शायद ज्यादा जरूरी है। भारत जिस रफ्तार से आगे बढ़ रहा है, क्या भारत का आम आदमी भी उसी रफ्तार से आगे बढ़ रहा है?

पहले वह, जिस पर हमें गर्व होना चाहिए। भारत के पास तारीफ के कई कारण हैं। सिर्फ जीडीपी की रफ्तार ही नहीं, निवेश, विनिर्माण, सेवाएं, बुनियादी ढांचा और निर्यात, कई मोर्चों पर भारत की अर्थव्यवस्था ने मजबूती दिखाई है। सकल स्थिर पूंजी निर्माण में भी मजबूत वृद्धि हुई और चौथी तिमाही में इसमें 10.8 प्रतिशत की वास्तविक बढ़त दर्ज हुई। वाणिज्य मंत्रालय के अनुसार वित्त वर्ष 2025-26 में वस्तुओं और सेवाओं का कुल निर्यात भी करीब 860.09 अरब डॉलर रहा, जो पिछले वर्ष से अधिक है। भारत नाममात्र जीडीपी के आकार के लिहाज से दुनिया की बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में चौथे स्थान पर पहुंच चुका है। रक्षा उत्पादन, इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण, सेमीकंडक्टर और डिजिटल अर्थव्यवस्था जैसे क्षेत्रों में भी विस्तार दिखाई दे रहा है।

लाल किले से भी यही आत्मविश्वास झलका। प्रधानमंत्री ने रक्षा उत्पादन में तेज विस्तार और इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण की बढ़ती क्षमता का उल्लेख किया। साथ ही एक साल में एक करोड़ युवाओं को AI प्रशिक्षण देने की घोषणा की गई। ये सब उस भारत की गवाही हैं जो बड़े सपने देखने और उन्हें आकार देने की कोशिश कर रहा है। तो उपलब्धियों पर गर्व क्यों न हो? बिल्कुल होना चाहिए। लेकिन यहीं से अगला सवाल शुरू होता है।

औसत का एक छोटा-सा छल

आर्थिक विकास को समझने में सबसे आसान और सबसे आकर्षक संख्या होती है प्रति व्यक्ति आय। नए राष्ट्रीय खातों के अनुसार 2024-25 में प्रति व्यक्ति शुद्ध राष्ट्रीय आय करीब 2.05 लाख रुपए और 2025-26 में करीब 2.20 लाख रुपए रहने का अनुमान है। औसत आय बढ़ना अच्छी खबर है, लेकिन यह अपने-आप नहीं बताता कि उस बढ़ोतरी का कितना हिस्सा किस वर्ग तक पहुंचा। जरा सोचिए, अगर दस लोगों में से दो की आमदनी छलांग लगाकर बढ़े और बाकी आठ की वहीं की वहीं ठहरी रहे, तब भी औसत चमकता हुआ दिखेगा। कागज पर घी दिखेगा, पर बहुतों की थाली में रोटी सूखी ही रह सकती है।

यही वजह है कि जीडीपी और प्रति व्यक्ति आय के साथ हमें यह भी देखना होगा कि आय का बंटवारा कैसा है। वर्ल्ड इनइक्वैलिटी रिपोर्ट 2026 के अनुसार भारत की ऊपरी एक प्रतिशत आबादी के पास देश की करीब 40 प्रतिशत संपत्ति है, जबकि निचले 50 प्रतिशत के हिस्से में राष्ट्रीय आय का करीब 15 प्रतिशत आता है। यानी बड़ी अर्थव्यवस्था होना और हर नागरिक का समृद्ध होना, दो अलग बातें हैं। भारत कितना समावेशी हो रहा है, इसके लिए हमें आय, संपत्ति और अवसर का बंटवारा देखना होगा।

रोजगार : सवाल गिनती का कम, गुणवत्ता का ज्यादा

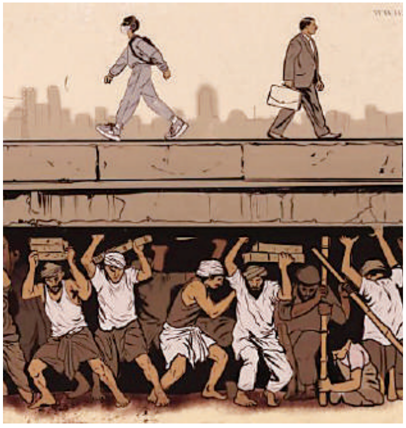

देश के सामने सबसे बड़ा आर्थिक सवाल रोजगार की गुणवत्ता का है। जून 2026 के आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण के मुताबिक 15 वर्ष और उससे अधिक आयु की आबादी में बेरोजगारी दर 5.5 प्रतिशत रही। ग्रामीण क्षेत्रों में यह 5 और शहरी क्षेत्रों में 6.6 प्रतिशत थी। इन आंकड़ों को देखकर यह कहना गलत होगा कि देश में रोजगार का हाहाकार मचा है। दूसरा सवाल और जरूरी हो जाता है, जो काम मिल रहा है, उसकी गुणवत्ता कैसी है?

क्या वह नियमित है?

क्या आमदनी सम्मान से जीने लायक है?

क्या उसमें आगे बढ़ने का रास्ता है?

क्या वह व्यक्ति की शिक्षा और कौशल का सही इस्तेमाल करता है?

युवाओं के मामले में सवाल और गहरा हो जाता है।

एक उत्पादन इकाई के प्रशिक्षण सत्र के दौरान अमृतलाल से मुलाकात हुई। एमबीए की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करने के बावजूद वह वहां क्लर्क है। योग्यता के अनुरूप नौकरी नहीं मिली तो मजबूरी में उसे यही काम चुनना पड़ा। उसकी कहानी अकेली नहीं है। हाथ में डिग्री और आंखों में सवाल लिए नौजवानों से हर हफ्ते मिलना होता है। समस्या सिर्फ नौकरी की संख्या की नहीं है, समस्या डिग्री और रोजगार के बीच की खाई की भी है।

इसीलिए भारत का लक्ष्य केवल 'रोजगार' बढ़ाना नहीं, रोजगार-योग्यता बढ़ाना होना चाहिए। यानी ऐसी शिक्षा और कौशल, जिन्हें उद्योग वास्तविक नौकरी और बेहतर आय में बदल सके। डिग्री और नौकरी के बीच की यह खाई कौशल, उद्योग से जुड़ी शिक्षा, अप्रेंटिसशिप और उद्यमिता से ही भरी जा सकती है। जहां तक महिलाओं की बात है, जून 2026 में 15 वर्ष और उससे अधिक आयु की महिलाओं की श्रम बल भागीदारी दर 32.7 प्रतिशत थी, जो पिछले वर्ष से बेहतर है, लेकिन अभी भी गुंजाइश बाकी है। भारत को अगर समावेशी विकास चाहिए, तो आधी आबादी की आर्थिक भागीदारी को किनारे रखकर यह कहानी पूरी नहीं होगी।

गांव बदला है, पर गांव की जेब का सवाल बाकी है

गांव की सूरत तेजी से बदली है। सड़क, बिजली, घर, बैंक खाता, डिजिटल भुगतान और योजनाओं की सीधी पहुंच ने करोड़ों जिंदगियों को सहारा दिया है। सुविधा में सुधार हुआ है, लेकिन सुविधा और समृद्धि एक चीज नहीं होतीं। गृह उपभोग व्यय सर्वेक्षण 2023-24 के अनुसार औसत मासिक प्रति व्यक्ति उपभोग व्यय गांव में करीब 4,122 रुपए और शहर में 6,996 रुपए था। यानी ग्रामीण और शहरी जेब के बीच की दूरी अभी भी साफ दिखाई देती है। यही वह जगह है जहां विकास का अगला चरण तय होगा।

गांव को केवल खेती के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। खाद्य प्रसंस्करण, ग्रामीण पर्यटन, छोटे उद्योग, हस्तशिल्प, स्थानीय सेवाएं और डिजिटल कारोबार, इन सबको ग्रामीण रोजगार के नए आधार में बदलना होगा। सड़क बन जाने के बाद अगला सवाल उस पर चलने वाले रोजगार का है। बैंक खाता खुल जाने के बाद अगला सवाल उस खाते में नियमित आय का है। डिजिटल भुगतान आ जाने के बाद अगला सवाल यह है कि भुगतान करने के लिए पर्याप्त कमाई भी है या नहीं। यही सुविधा से समृद्धि तक की यात्रा है।

मध्यम वर्ग : गाड़ी का इंजन, पर दबाव में

भारत का मध्यम वर्ग अजीब जगह खड़ा है। वही बड़ा करदाता है, वही बड़ा उपभोक्ता है, लेकिन उसकी परेशानी को केवल महंगाई की एक संख्या से नहीं समझा जा सकता। जुलाई 2026 में खुदरा महंगाई 4.45 प्रतिशत रही, लेकिन परिवार महंगाई को प्रतिशत में नहीं जीता; वह उसे दूध, सब्जी, स्कूल फीस, दवा, पेट्रोल और मासिक किस्तों में महसूस करता है। महंगाई की दर घटने का मतलब कीमतें घटना नहीं, सिर्फ कीमतों के बढ़ने की रफ्तार धीमी होना है। यही कारण है कि तनख्वाह बढ़ने के बावजूद जेब कभी-कभी पहले जैसी ही खाली क्यों लगती है, इसका जवाब केवल सैलरी स्लिप में नहीं मिलता। 2025 के बजट में नई कर व्यवस्था के तहत 12 लाख रुपए तक की कुल आय पर छूट के जरिए कर देनदारी शून्य करने का प्रावधान और सितंबर 2025 में जीएसटी दरों में बदलाव मध्यम वर्ग के लिए राहत लेकर आए। इसलिए मध्यम वर्ग को केवल 'बेचारा' कह देना भी अधूरा सच होगा। दबाव सच्चा है, लेकिन राहत, आकांक्षा और उपभोग की नई क्षमता भी उतनी ही सच्ची है।

निवेश, उद्योग और छोटे कारोबार की रीढ़

अर्थव्यवस्था का उजला पक्ष निवेश है। सड़क, रेल, बंदरगाह और बुनियादी ढांचे पर सरकार का खर्च बढ़ा है। इलेक्ट्रॉनिक्स, सेमीकंडक्टर, रक्षा और हरित ऊर्जा जैसे क्षेत्रों में नए दरवाजे खुले हैं। लेकिन भारत की रोजगार-कहानी अकेले बड़े कारखानों से नहीं लिखी जाएगी। असली रीढ़ हैं छोटे उद्योग। एमएसएमई क्षेत्र जीडीपी, निर्यात और रोजगार में बड़ा योगदान देता है। लेकिन इनके सामने सिर्फ पूंजी की कमी नहीं है। समय पर भुगतान, तकनीक, बाजार तक पहुंच, डिजिटल क्षमता और नियामकीय सरलता भी उतनी ही जरूरी हैं।

निर्मला की कहानी यही बताती है। उसे सिर्फ 50 हजार रुपए नहीं मिले थे, उसे उस 50 हजार रुपए के साथ बाजार में उतरने का मौका मिला था। यानी छोटे कारोबार को ऋण देना जरूरी है, लेकिन उससे भी जरूरी है कि वह कारोबार चल सके, बढ़ सके और टिक सके।

निर्यात की चमक और दुनिया की करवट

रिकॉर्ड स्तर का निर्यात इस बात की गवाही है कि भारत दुनिया के बाजार में अपनी जगह मजबूत कर रहा है। लेकिन दुनिया पहले से ज्यादा अनिश्चित भी है। पश्चिम एशिया का तनाव, तेल की कीमतें, टैरिफ की खींचतान और वैश्विक मांग में उतार-चढ़ाव की आंच भारत तक पहुंचती है। भारत जैसे तेल-आयातक देश के लिए कच्चे तेल का भाव सिर्फ व्यापार की बात नहीं। वह रुपये से लेकर परिवहन लागत और आखिरकार परिवार की रसोई तक पहुंचता है। असली आत्मनिर्भरता यह होगी कि भारत दुनिया से व्यापार भी करे, निवेश भी आकर्षित करे और बाहरी झटकों को झेलने की अपनी क्षमता भी मजबूत करे।

तो फिर इतनी बड़ी खाद्य-सुरक्षा व्यवस्था क्यों?

यह सवाल जितना तीखा है, उतना ही संवेदनशील भी। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा व्यवस्था के तहत करीब 81.35 करोड़ लोगों तक कवरेज का प्रावधान है और प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना के तहत मुफ्त खाद्यान्न की व्यवस्था जारी है। लेकिन इसे यूं पढ़ना कि इतने करोड़ भारतीय अपना पेट ही नहीं भर सकते, आधा सच होगा। इस दायरे में कानूनी पात्रता और पुराने जनसंख्या मानक भी शामिल हैं। साथ ही खाद्य सुरक्षा केवल गरीबी का प्रमाण नहीं; यह करोड़ों परिवारों के लिए आर्थिक जोखिम से सुरक्षा की व्यवस्था भी है।

फिर भी सवाल अपनी जगह कायम है कि जब अर्थव्यवस्था इतनी तेजी से बढ़ रही है, तब इतनी बड़ी खाद्य-सुरक्षा व्यवस्था की जरूरत क्यों है? इसका जवाब योजना को खत्म करना नहीं, बल्कि उसकी जरूरत को धीरे-धीरे कम करना है। किसी योजना की असली सफलता केवल लाभार्थियों की संख्या में नहीं, बल्कि लोगों की अपनी आय और आर्थिक सुरक्षा बढ़ने में है।

गरीबी घटी है, यह भी सच है

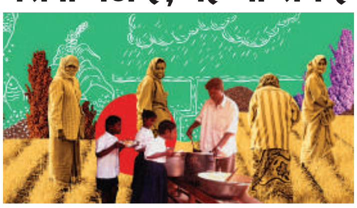

विश्व बैंक के हालिया आकलन के अनुसार भारत में 2023-24 में उसकी विश्लेषणात्मक गरीबी रेखाओं पर ग्रामीण और शहरी गरीबी में पिछले वर्षों की तुलना में बड़ी गिरावट दर्ज हुई है।

इस बदलाव के पीछे आर्थिक विकास के साथ-साथ बुनियादी ढांचे, वित्तीय समावेशन, सीधे खाते में सहायता, खाद्य सुरक्षा और सामाजिक योजनाओं की भी भूमिका रही है। इसलिए 'कुछ नहीं बदला' कहना नाइंसाफी होगी। लेकिन 'विकास हुआ' और 'सबका विकास हुआ', ये दो अलग वाक्य हैं। पहले वाक्य का जवाब काफी हद तक मिल चुका है। दूसरे की परीक्षा अभी बाकी है।

एक नजर में : भारत की आर्थिक तस्वीर

चमक

- **जीडीपी वृद्धिः** 7.7% - वित्त वर्ष 2025-26; चौथी तिमाही में 7.8%।
- **निवेशः** जीएफसीएफ में मजबूत वृद्धि; चौथी तिमाही में वास्तविक वृद्धि 10.8%।
- **निर्यातः** वस्तु और सेवाएं मिलाकर लगभग 860.09 अरब डॉलर।
- **प्रति व्यक्ति शुद्ध राष्ट्रीय आयः** लगभग 2.05 लाख (2024-25) से बढ़कर 2.20 लाख (2025-26 अनुमान)।

चुनौती

- **बेरोजगारीः** जून 2026 में 5.5%; ग्रामीण 5.0%, शहरी 6.6%।
- **श्रम बल भागीदारीः** 15+ आबादी में 54.4%; महिला भागीदारी दर 32.7%।
- **गांव-शहर खाईः** HCES 2023-24 के अनुसार औसत मासिक प्रति व्यक्ति उपभोग व्यय गाँव में 4,122, शहर में 6,996।
- **असमानताः** वर्ल्ड इनइक्वैलिटी रिपोर्ट 2026 के अनुसार शीर्ष 1% आबादी के पास करीब 40% संपत्ति।
- **खाद्य सुरक्षाः** राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के तहत लगभग 81.35 करोड़ लोगों तक कवरेज का प्रावधान।
- **मध्यम वर्गः** जुलाई 2026 में खुदरा महंगाई 4.45%; यह कीमतें घटने का नहीं, बढ़ने की रफ्तार धीमी होने का संकेत है।
- **कर राहतः** नई कर व्यवस्था में 12 लाख रुपए तक की कुल आय पर रीबेट के जरिए कर देनदारी शून्य करने की व्यवस्था।
- **एमएसएमः** रोजगार, उत्पादन और निर्यात के लिए निर्णायक आधार; अगली रोजगार वृद्धि में इनकी भूमिका महत्वपूर्ण।

असली चिट्ठा कहां लिखा जाता है?

किसी देश का असली चिट्ठा केवल सरकारी फाइल में नहीं, आम आदमी के घर में लिखा जाता है। वह देखता है-

क्या आमदनी व बचत बढ़ी?

क्या कर्ज का बोझ घटा व बच्चे बेहतर पढ़ रहे हैं?

क्या बीमारी से आर्थिक संकट नहीं बढ़ता?

क्या नौकरी सिर्फ खर्च चलाती है या कल की उम्मीद भी है?

यही वे सवाल हैं जो जीडीपी के आंकड़े से आगे जाते हैं।

अगले पांच साल : असली इम्तिहान

आगामी पांच साल में भारत का असली इम्तिहान कठिन है और वह है इस तेज विकास को हर घर की आर्थिक सुरक्षा में बदलना। इसके लिए पांच मोर्चे निर्णायक होंगे।

पहला- अच्छी गुणवत्ता का रोजगार। काम में नियमितता, बेहतर उत्पादकता व उचित आय।

दूसरा- वास्तविक आमदनी में बढ़त। महंगाई के बाद जेब में बचत।

तीसरा- छोटे उद्योगों का विस्तार।

चौथा- शिक्षा और कौशल को उद्योग की जरूरत से जोड़ना। डिग्री और नौकरी के बीच की दूरी कम करनी होगी।

पांचवा- महिलाओं की आर्थिक भागीदारी।

ललित के हाथ में आज स्मार्टफोन है। उसके घर तक सड़क पहुंच चुकी है। उसका छोटा बेटा कॉलेज जा रहा है। ये छोटी उपलब्धियां नहीं हैं। लेकिन उसी घर का बड़ा बेटा अपनी योग्यता के अनुरूप नौकरी की तलाश में दो साल से भटक रहा है। यही आज के भारत की कहानी है। हमने बहुत कुछ हासिल किया है। लेकिन आगे की यात्रा का सवाल अब यह नहीं है कि भारत कितना बड़ा बनेगा। सवाल यह है कि भारत की बढ़ती आर्थिक ताकत आम भारतीय की जिंदगी में कितनी गहराई से उतरेगी।

विकास का अगला चरण तभी सफल माना जाएगा जब जीडीपी की रफ्तार के साथ आमदनी की रफ्तार बढ़े, रोजगार की गुणवत्ता सुधरे, छोटे कारोबार मजबूत हों, महिलाओं की आर्थिक भागीदारी बढ़े और परिवार को यह भरोसा हो कि बीमारी, बेरोजगारी या अचानक आए खर्च से उसकी पूरी जिंदगी नहीं डगमगाएगी।

विकसित भारत का सपना तभी सचमुच विकसित भारत बनेगा, जब आर्थिक विकास और आम आदमी का विकास एक-दूसरे के पर्याय बनें। क्योंकि किसी देश की असली कामयाबी सिर्फ इस बात से नहीं मापी जाती कि वह दुनिया की कौन-सी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। वह इस बात से भी मापी जाती है कि उसके नागरिक अपने भविष्य को कितना सुरक्षित, सम्मानजनक और बेहतर मानते हैं।

पंद्रह साल पहले का ललित आज से बेहतर नहीं था, यह तय है। अब असली सवाल यह है कि अगले पंद्रह साल का ललित आज के ललित से कितना बेहतर होगा? भारत की अर्थव्यवस्था का जवाब जीडीपी दे सकती है। लेकिन भारत के विकास का जवाब ललित की जिंदगी देगी। और इसलिए, आज सवाल फिर वही है, "भारत आगे बढ़ रहा है, लेकिन क्या भारतीय भी उसी गति से आगे बढ़ रहा है?"

पर्ची खुली, कुर्सी फिसली

बलवंत राज मेहता,
वरिष्ठ व्यंग्यकार

राजस्थान के निकाय चुनाव ने एक बार फिर साबित कर दिया कि राजनीति में सबसे बड़ा रणनीतिकार कभी-कभी चुनाव आयोग की लॉटरी भी हो सकती है। वार्ड आरक्षण की घोषणा होते ही वर्षों से जनता की सेवा का दावा करने वाले कई नेताओं की सेवा अचानक नए वार्ड की तलाश में निकल पड़ी। कल तक जो पार्षद गली-गली विकास का हिसाब दे रहे थे, आज घर-घर रिश्तेदारी का गणित जोड़ रहे हैं। कहीं महिला आरक्षण आया तो नेता'जी ने लोकतंत्र की नई परिभाषा खोज ली जनता की सेवा अब गृहलक्ष्मी करेंगी। उधर जातिगत आरक्षण ने ऐसे नेताओं को भी अपनी जाति याद दिला दी, जो चुनाव के अलावा पूरे पांच साल सबका साथ की राजनीति करते रहे। सबसे मनोरंजक दृश्य पार्टी कार्यालयों में है। टिकट की चर्चा कम, पारिवारिक वंशावली अधिक देखी जा रही है। कोई पत्नी को तैयार कर रहा है, कोई बहू को, तो कोई भाभी को जनसेवा का महत्व समझा रहा है। कार्यकर्ता बेचारा अभी भी पूछ रहा है नेता'जी, विचारधारा क्या होगी? जवाब मिलता है पहले यह पता करो कि हमारा वार्ड किस श्रेणी में गया है? लोकतंत्र में जनता पांच साल बाद फैसला सुनाती है, लेकिन आरक्षण की लॉटरी पांच मिनट में पूरे राजनीतिक समीकरण बदल देती है।

जादू का असली खेल

राजस्थान में जादूगरों के सम्मेलन की घोषणा हुई तो लगा कि आखिर जादू को उसका सम्मान मिलने वाला है। फिर याद आया कि हमारे यहां सबसे बड़े जादूगर तो मंच पर नहीं, राजनीति में मिलते हैं। कोई घाटे को विकास बना देता है, कोई वादों को उपलब्धि और कोई चुनावी घोषणा को अगले चुनाव तक गायब कर देता है। अब जादूगर जीएसटी से मुक्ति मांग रहे हैं। मांग जायज़ है, क्योंकि उनका जादू कम से कम टिकट लेकर दिखता है। असली करिश्मे तो वे हैं जो जनता की जेब हल्की और उम्मीद भारी कर देते हैं। पूर्व मुख्यमंत्री ने वर्तमान मुख्यमंत्री को शो देखने का न्योता दिया है। यदि पूरा मंत्रिमंडल पहली पंक्ति में बैठ जाए तो शायद दोनों पक्ष एक-दूसरे की कला से कुछ नया सीख लें। एक भ्रम पैदा करने की बारीकियां और दूसरा तालियां बटोरने का विज्ञान। बस डर इतना है कि कहीं सम्मेलन के अंत में असली जादूगर फिर वही न पूछ बैठे हुज़ूर, अब हमारी रोज़ी कहां गायब हो गई?

ब्रिक्स आया, महंगाई मुस्कराई

जयपुर में ब्रिक्स सम्मेलन की ऐसी धूम है कि लगता है दुनिया की अर्थव्यवस्था अब हवामहल की छांव में ही सुधरेगी। मंच पर अर्थशास्त्री वैश्विक व्यापार का नया नक्शा बना रहे हैं, और आम आदमी किराने की दुकान पर पुराने उधार का हिसाब। पहले दिन निजी निवेश और आर्थिक सहयोग पर गंभीर मंथन हुआ। सम्मेलन कक्ष में कहा गया कि पूंजी को भरोसा चाहिए। उधर जयपुर का व्यापारी बोला भरोसा तो हमें भी चाहिए, ग्राहक कब भुगतान करेगा? विदेशी प्रतिनिधि राजस्थानी पगड़ी पहनकर तस्वीरें खिंचवा रहे हैं, जबकि स्थानीय उद्योगपति सोच रहे हैं कि फोटो से ज़्यादा काम कोई निवेश की घोषणा कर दे। ब्रिक्स की बैठकों में डॉलर के विकल्प खोजे जा रहे हैं, लेकिन सब्ज़ी मंडी में टमाटर अब भी अपने ही रेट पर चलता है। लगता है अर्थशास्त्र का सबसे बड़ा सिद्धांत वही है। सम्मेलन जितना बड़ा, आम आदमी की जेब उतनी ही छोटी महसूस होती है।

ई-बस आई, अब यात्री सुधरें!

मुख्यमंत्री ने 71 ई-बसों को हरी झंडी दिखा दी। सरकार ने अपना काम कर दिया, अब बारी मुसाफिरों की है। जो बस स्टॉप पर नहीं, ठीक उसके दस कदम आगे खड़े होकर बस रुकवाते हैं और फिर शिकायत करते हैं कि व्यवस्था बिगड़ी हुई है। ई-बसें प्रदूषण कम करेंगी, लेकिन यात्रियों की आदतों का धुआं कौन कम करेगा? कोई पान की पीक से सीट रंगेगा, कोई मूंगफली के छिलकों से फर्श सजाएगा, तो कोई दरवाज़ा बंद होने से पहले ही ओलंपिक धावक बन जाएगा। सरकार ने आधुनिक बसें दी हैं। उम्मीद है जनता भी विंडो से थूक सेवा और सीट पर नाम लिखो अभियान बंद करेगी। वरना कल को ई-बस नहीं, ई-शर्म चलानी पड़ेगी। जो हर गंदगी पर मुसाफिर का चेहरा स्क्रीन पर दिखा दे। बसें चार्ज होंगी, काश यात्री भी थोड़े संस्कार से चार्ज हो जाएं!

लाइक लूटने पर लगाम

सरकारी स्कूलों में फोटो-वीडियो पर रोक की खबर सुनते ही सोशल मीडिया के उन योद्धाओं की आत्मा कांप उठी, जिनका कैमरा ही रोजी-रोटी, प्रसिद्धि और फॉलोअर का ऑक्सीजन सिलेंडर है। स्कूल में बच्चा पढ़ रहा हो या मास्टर पढ़ा रहा हो, इनका सवाल एक ही भाई, कंटेंट मिलेगा या नहीं? सरकार कहती है बच्चों की निजता बचानी है। सोशल मीडिया के शूरवीर पूछते हैं लेकिन हमारी टीआरपी का क्या होगा? उन्हें हर घटना में एक वीडियो, हर वीडियो में सनसनी और हर सनसनी में लाखों व्यू नजर आते हैं। पहले लोग स्कूल में पढ़ने जाते थे, अब कुछ लोग कैमरा लेकर पहुंचते हैं। बच्चा सवाल का जवाब दे या न दे, वीडियो में अंगूठा ऊपर होना चाहिए। शिक्षक की पूरी बात सुनी जाए या नहीं, मगर शीर्षक ऐसा हो कि देखने वाला समझे राजस्थान की शिक्षा व्यवस्था आज ही स्वर्ग पहुंच गई या रसातल में चली गई। असल समस्या यह है कि सोशल मीडिया का कैमरा सच नहीं खोजता, सामग्री खोजता है। जिसे जितना मसालेदार दृश्य मिला, उसके उतने ही लाइक और व्यू। अब सरकार ने कैमरा रोका है तो बेचैनी स्वाभाविक है। आखिर बिना अनुमति के सच दिखाकर प्रसिद्ध होने का कारोबार कैसे चलेगा? लगता है अगली मांग होगी शिक्षा विभाग कृपया लाइक और व्यू के लिए भी कोई अनुमति-पत्र जारी करे!

सत्ता का नया कुरुक्षेत्र: स्मार्टफोन

मणिमाला शर्मा,
वरिष्ठ पत्रकार और विश्लेषक

एआई, डेटा और सोशल मीडिया ने चुनावी राजनीति का तरीका बदल दिया है। डीपफेक और लक्षित प्रचार के बीच सवाल यह है कि तकनीक मतदाता को अधिक जागरूक बनाएगी या उसकी स्वतंत्र पसंद को प्रभावित करेगी।

रैलियों में उड़ती धूल, लाउडस्पीकर का शोर, कार्यकर्ताओं की टोलियां और चाय की दुकानों पर चुनावी बहसें भारतीय लोकतंत्र की पुरानी तस्वीर हैं। कभी नेता की लोकप्रियता नापने के लिए चौपाल, नुक्कड़ सभा और पार्टी कार्यकर्ताओं का नेटवर्क ही काफी माना जाता था। अब इस चुनावी भूगोल में एक नई जगह जुड़ गई है और वह है, मोबाइल स्क्रीन।

सुबह आंख खुलते ही जिस स्क्रीन पर खबर, मनोरंजन, विज्ञापन और रिश्तेदारों के संदेश एक साथ आते हैं, वहीं राजनीति भी दस्तक दे रही है। अब हर मतदाता को एक जैसा राजनीतिक संदेश दिखाना जरूरी नहीं। एआई और डेटा के सहारे संदेश को व्यक्ति, उम्र, भाषा, रुचि और मुद्दे के हिसाब से ढाला जा सकता है। यानी पहले नेता जनता तक पहुंचने के लिए उसे अपने मंच पर बुलाता था। लेकिन आज मामला उल्टा है। अब राजनीति जनता की जेब में रखे फोन तक पहुंचने की कोशिश में लगी है।

डेटा से मतदाता तक : चुनाव का नया गणित

राजनीतिक दलों के लिए मतदाता को समझना कोई नई बात नहीं है। वर्षों से बूथ कार्यकर्ता, स्थानीय नेता, सामाजिक समीकरण, घर-घर संपर्क और चुनावी सर्वे इसके आधार रहे हैं। अब डिजिटल व्यवहार ने इस गणित में एक नया अध्याय जोड़ दिया है। सोशल मीडिया पर हमारी पसंद, क्लिक और प्रतिक्रियाओं से ऐसे संकेत मिल सकते हैं जिनके आधार पर अलग-अलग समूहों के लिए अलग संदेश तैयार किए जाएं। इसे हाइपर-पर्सनलाइजेशन कहा जाता है।

मान लीजिए एक युवा मतदाता रोजगार और पेपर लीक को लेकर परेशान है। उसकी स्क्रीन पर उसी पार्टी के संदेश रोजगार और युवाओं की आकांक्षाओं के इर्द-गिर्द दिखाई देने लग जाएं। उसी घर में बैठे उसके माता-पिता को वही पार्टी कल्याणकारी योजनाओं, सुरक्षा या सांस्कृतिक मुद्दों के जरिए संबोधित करने की कोशिश करती नजर आएगी। संदेश एक ही पार्टी का है, लेकिन उसका चेहरा मतदाताओं की उम्र और मुद्दों के हिसाब से अलग होगा।

यहीं से लोकतंत्र के सामने असली सवाल खड़ा होता है। यदि हर राजनीतिक दल मतदाता को उसकी पसंद के हिसाब से अलग राजनीतिक सच दिखाएगा तो साझा सार्वजनिक बहस बचेगी कहां? यह रणनीति राजनीतिक दलों के लिए उपयोगी और मतदाता के लिए सुविधाजनक हो सकती है। लेकिन पारदर्शिता के अभाव में यही सुविधा अदृश्य राजनीतिक प्रभाव में बदल सकती है।

एआई : प्रचार का नया हथियार या लोकतांत्रिक औजार?

यहां एआई को केवल खतरे की तरह देखना भी सही नहीं होगा। भारत जैसे बहुभाषी देश में एआई किसी नेता के भाषण को कई भारतीय भाषाओं में तेजी से तैयार करने, कम संसाधनों में वीडियो और प्रचार सामग्री बनाने और स्थानीय मतदाताओं तक उनकी भाषा में पहुंचने के अवसर पैदा कर सकता है। राजनीति में तकनीक कभी सिर्फ तकनीक नहीं रहती। उसके पीछे पैसा, सत्ता और मतदाता को प्रभावित करने की इच्छा होती है। यहां सभी राजनीतिक दलों के लिए पारदर्शिता जरूरी है। मतदाताओं को पता होना चाहिए कि सामग्री किसने बनाई, किसके पैसे से बनाई और क्यों दिखाई जा रही है।

वरना राजनीति का पुराना सवाल, 'यह नेता किसके लिए बोल रहा है?', बदलकर यह हो जाएगा कि, 'मेरे फोन पर यह बात मुझे ही क्यों दिखाई जा रही है?' जब आवाज असली लगे, लेकिन नेता ने वह बात कही ही न हो, तब जनरेटिव एआई चुनावी प्रचार को और संवेदनशील बना देता है। अब आवाज की नकल, चेहरे का इस्तेमाल और किसी व्यक्ति को ऐसी बात कहते हुए दिखाना संभव है जो उसने कही ही नहीं।

2024 के लोकसभा चुनाव के दौरान अभिनेता आमिर खान और रणवीर सिंह के ऐसे फर्जी एआई वीडियो सामने आए, जिनमें उन्हें प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की आलोचना और कांग्रेस के समर्थन में बोलते हुए दिखाया गया था। दोनों अभिनेताओं ने इन्हें फर्जी बताया। आमिर खान की ओर से पुलिस में शिकायत दर्ज कराई गई।

खतरा केवल फर्जी सामग्री बनाने तक सीमित नहीं है। 'लायर्स डिविडेंड' नाम का एक नया संकट भी हमारे सामने है। जब समाज में डीपफेक का डर बढ़ जाता है तो वास्तविक ऑडियो या वीडियो को भी कोई व्यक्ति यह कहकर खारिज कर सकता है कि वह नकली है। यानी कल समस्या सिर्फ यह नहीं होगी कि झूठ क्या है? समस्या यह भी होगी कि सच पर भरोसा कैसे किया जाए।

डीपफेक की रफ्तार, सच की सुस्ती

- चुनावों में अफवाहें पहले भी फैलती थीं। फर्क यह था कि झूठ को गढ़ने और फैलाने की अपनी सीमाएं थीं। अब एआई ने उस झूठ को चेहरा, आवाज और विश्वसनीयता का भ्रम दे दिया है। मतदान से कुछ घंटे पहले उम्मीदवार का भड़काऊ ऑडियो वायरल हो जाए तो तथ्य-जांच तक हजारों लोग उसे सुन चुके होंगे। राजनीति में खंडन चाहे जितना मजबूत हो, पहली धारणा हमेशा मिटती नहीं है।
- डीपफेक किसी उम्मीदवार की छवि खराब करने के साथ सामाजिक तनाव भी पैदा कर सकता है। इसे सिर्फ तकनीकी समस्या मानना भूल होगी। यह लोकतांत्रिक भरोसे की समस्या है। इसी खतरे को देखते हुए निर्वाचन आयोग ने मई 2024 में राजनीतिक दलों को एआई आधारित डीपफेक और गलत सूचना के इस्तेमाल से बचने की सलाह दी थी। आयोग ने ऐसे कंटेंट की जानकारी मिलने के बाद उसे हटाने के लिए अधिकतम तीन घंटे की समय-सीमा तय की थी।

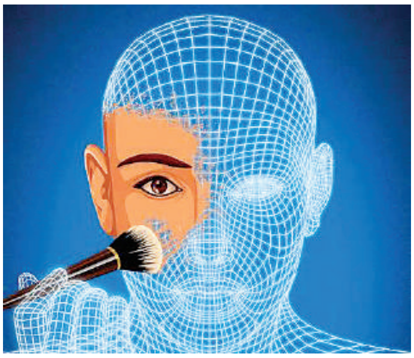

एल्गोरिदम को क्या पसंद है? आपका गुस्सा

सोशल मीडिया का कारोबार ध्यान पर चलता है। जिस सामग्री पर लोग ज्यादा प्रतिक्रिया देते हैं, उसके अधिक लोगों तक पहुंचने की संभावना बढ़ती है। और इंसानी मन की विडंबना यह है कि शांत, तथ्यपूर्ण और जटिल नीति-बहस की तुलना में गुस्सा, डर, सनसनी और विवाद कहीं जल्दी ध्यान खींचते हैं। एक तीखा मीम, तीस सेकंड की रील या भावनात्मक वीडियो किसी नीति दस्तावेज से कहीं तेजी से फैल सकता है। यह दावा करना गलत होगा कि एल्गोरिदम सीधे आपका वोट तय करता है। लेकिन मतदाताओं को पूछना चाहिए कि उन्हें बार-बार क्या दिखाया जा रहा है और क्या जानबूझकर नहीं दिखाया जा रहा। क्योंकि मतदाता की पसंद केवल मतदान के दिन नहीं बनती। वह महीनों तक देखी, सुनी और दोहराई गई सूचनाओं से भी आकार लेती है।

Gen-Z : 30 सेकंड में सिमटती राजनीति?

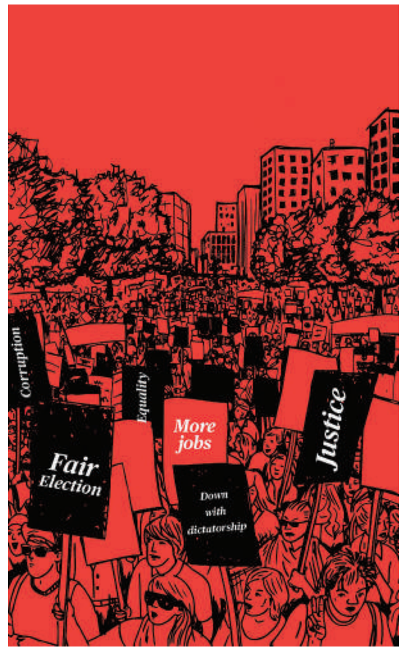

नई पीढ़ी का बड़ा हिस्सा राजनीति को सोशल मीडिया, शॉर्ट वीडियो और डिजिटल माध्यमों के जरिए देखता है। इसे केवल युवाओं की कमजोरी कहना गलत होगा। असली समस्या सूचना की बाढ़ है। एक ही स्क्रीन पर खबर, प्रचार, विज्ञापन और झूठी सूचना एक ही गति से दौड़ रहे हैं। बेरोजगारी, शिक्षा और प्रतियोगी परीक्षाओं से जुड़ी चिंताएं युवाओं की राजनीति को प्रभावित कर रही हैं। तीस सेकंड की रील बेरोजगारी की पूरी अर्थव्यवस्था नहीं समझा सकती, लेकिन बेरोजगारी के प्रति युवाओं की धारणा जरूर प्रभावित कर सकती है।

इसलिए डिजिटल साक्षरता अब तकनीकी कौशल भर नहीं है। यह लोकतांत्रिक जिम्मेदारी है। किसी सनसनीखेज सामग्री को तुरंत साझा करने से पहले उसके स्रोत की जांच, दूसरे विश्वसनीय माध्यमों से पुष्टि और पुराने वीडियो के संदर्भ की पड़ताल जरूरी है। डिजिटल नागरिक का पहला हथियार अब 'शेयर' बटन नहीं, सवाल होना चाहिए।

नियमन की लक्ष्मण रेखा... एआई के राजनीतिक इस्तेमाल पर स्पष्ट नियम अब विकल्प नहीं, आवश्यकता है। एआई से तैयार तस्वीर, वीडियो और ऑडियो की पहचान स्पष्ट होनी चाहिए। राजनीतिक विज्ञापन में यह बताया जाना चाहिए कि सामग्री किसने बनाई और उसके पीछे पैसा किसका है। चुनाव आयोग को डिजिटल प्रचार, एआई सामग्री और ऑनलाइन खर्च की निगरानी और अधिक स्पष्ट करनी होगी। साथ ही डीपफेक और चुनावी दुष्प्रचार की शिकायतों पर तेज कार्रवाई की व्यवस्था करनी होगी। लेकिन सावधानी यहां भी जरूरी है। गलत सूचना रोकने के नाम पर किसी सरकार या संस्था को 'सच' का अंतिम निर्णायक बना देना लोकतंत्र के लिए दूसरा खतरा पैदा कर सकता है। नियमन ऐसा होना चाहिए जो वास्तविक झूठ को रोके, लेकिन मतदाताओं की असहमति को नहीं।

जमीन बनाम स्क्रीन नहीं, दोनों का गठजोड़

भविष्य के चुनावों में अहम सवाल है कि क्या अगली चुनावी राजनीति जमीनी संगठन को पीछे छोड़ देगी? लेकिन भारत की विविधता को देखते हुए अभी ऐसा कहना जल्दबाजी होगी। मैं जहां से देख पा रही हूं, वहां से दिखाई देता है कि मोबाइल स्क्रीन माहौल बना सकती है, किसी मुद्दे को चर्चा में ला सकती है और मतदाता की प्राथमिकताओं को प्रभावित कर सकती है। लेकिन चुनाव केवल नैरेटिव से नहीं जीते जाते हैं। स्थानीय संगठन, उम्मीदवार की विश्वसनीयता, कार्यकर्ताओं का नेटवर्क, घर-घर संपर्क और मतदान के दिन मतदाता को बूथ तक पहुंचाने की क्षमता अब भी निर्णायक भूमिका निभाती है।

इसलिए भविष्य की राजनीति न पूरी तरह जमीन पर होगी, न पूरी तरह स्क्रीन पर। वह होगी 'फिजिटल' राजनीति। स्क्रीन ध्यान खींचेगी। डेटा संदेश को व्यक्तिगत बनाएगा। एआई भाषा और सामग्री तैयार करेगा। लेकिन जमीन उस राजनीतिक संपर्क को वोट में बदलने की कोशिश करेगी। यानी गांव-कस्बे की चौपालें खत्म नहीं होंगी, बस एक और नई चौपाल आपकी हथेली में होगी।

चुनाव आसान, लोकतंत्र जटिल?

एआई का असली परीक्षण यह नहीं कि वह कितनी सुंदर तस्वीर या कितनी भाषाओं में नेता की आवाज बना सकता है। असली सवाल है कि क्या वह नागरिक को अधिक सूचित बनाता है या अधिक प्रभावित। यदि मतदाता जानता है कि सामग्री एआई से बनी है, उसे किसने बनाया और उसका स्रोत क्या है, तो तकनीक लोकतंत्र की मददगार हो सकती है। लेकिन यदि वही तकनीक अदृश्य प्रोफाइलिंग, लक्षित भय, नकली आवाज और भावनात्मक प्रचार के जरिए मतदाता की सूचना की दुनिया को सीमित करने लगेगी तो लोकतंत्र का संकट गहरा जाएगा।

अगली राजनीतिक लड़ाई जमीन बनाम मोबाइल की नहीं होगी। असली लड़ाई होगी मतदाता की स्वतंत्र पसंद और उसे प्रभावित करने वाली अदृश्य तकनीकों के बीच। हमारा स्मार्टफोन चुनाव का मालिक तो शायद नहीं बनेगा। लेकिन वह मतदाता की राजनीतिक दुनिया का सबसे शक्तिशाली दरवाजा जरूर बन सकता है।

सवाल है कि उस दरवाजे के दूसरी तरफ कौन खड़ा होगा? कोई राजनीतिक दल, तकनीकी कंपनी, अदृश्य एल्गोरिदम या फिर जागरूक नागरिक? ऐसे में हो सकता है कि आने वाले चुनावों में लोकतंत्र की असली परीक्षा ईवीएम का बटन दबाने से कहीं पहले ही शुरू हो जाए।

सत्ता, संतुलन और दिल्ली दरबार

सुरेश व्यास ✍ वरिष्ठ पत्रकार
एवं राजनीतिक विश्लेषक

भजनलाल शर्मा सरकार पौने तीन साल पूरे करने के मुहाने पर है और प्रदेश चुनावी मोड में प्रवेश कर चुका है। सरकार अपनी उपलब्धियां गिना रही है, लेकिन नौकरशाही, कानून-व्यवस्था, सत्ता-संगठन तालमेल और दिल्ली पर निर्भरता के आरोपों के बीच मुख्यमंत्री की स्वतंत्र राजनीतिक पहचान अब भी सबसे बड़ा सवाल बनी हुई है।

राजस्थान में मुख्यमंत्री भजनलाल शर्मा के नेतृत्व वाली सरकार के पौने तीन साल का कार्यकाल पूरा हो रहा है। प्रदेश में अभी निकाय चुनावों की अधिसूचना जारी हो गई है और अगले महीने पंचायत चुनावों की घोषणा भी हो जाएगी। कुल मिलाकर तीन साल का कार्यकाल चुनाव होते-होते पूरा हो जाएगा यानी 2028 के विधानसभा चुनाव की बिसात बिछाने का वक्त आ जाएगा। ऐसे में अब हिसाब भी लगाया जाने लगा है कि भजनलाल सरकार आम लोगों और पार्टी आलाकमान की अपेक्षाओं पर कितना खरी उतरी है।

दिसम्बर 2023 में भाजपा नेतृत्व ने पहली बार के विधायक भजनलाल को राजस्थान की कमान सौंपी तो इसे राज्य की राजनीति में एक नए युग का सूत्रपात माना गया। पारम्परिक दिग्गज क्षत्रपों को दरकिनार कर उस वक्त के प्रदेश महामंत्री और संगठन की पृष्ठभूमि वाले एक अनाम कार्यकर्ता को मुख्यमंत्री की कुर्सी पर बिठाना पार्टी नेतृत्व का एक साहसिक और दूरगामी प्रयोग था। अब जब भजनलाल को कमान सम्भाले तीन साल का वक्त होने को आया है तो उनकी सरकार के कामकाज का मूल्यांकन फाइलों के निपटारे और घोषणाओं के क्रियान्वयन तक सीमित नहीं रह जाता। ऐसे में सबसे बड़ा सवाल यह खड़ा होता है कि क्या भजनलाल इन तीन सालों में अपनी स्वतंत्र, सर्वमान्य और सशक्त राजनीतिक पहचान स्थापित करने में कामयाब हो सके हैं?

सरकारी दावों पर भरोसा करें तो बेशक, इन तीन सालों में सरकार ने काफी काम किए हैं। इनमें सबसे बड़ी उपलब्धि के रूप में दशकों से अटके यमुना जल समझौते के क्रियान्वयन की शुरुआत, ईस्टर्न राजस्थान कैनाल परियोजना का शिलान्यास और राइजिंग राजस्थान के नाम पर निवेश को आकर्षित करना अहम माना जा सकता है, लेकिन यह सवाल फिर भी अनुत्तरित रह जाता है कि क्या भजनलाल खुद की एक प्रखर प्रशासक वाली छवि बना पाए हैं? फिर उनकी बार-बार दिल्ली यात्राएं हमेशा चर्चा में रहती हैं। हालांकि वे कहते हैं कि उनके दिल्ली दौरे वरिष्ठ नेताओं के मार्गदर्शन और राज्य की परियोजनाओं के क्रियान्वयन में केंद्र सरकार की अधिकाधिक मदद हासिल करने के लिए होते हैं, लेकिन उनके विरोधी और खासकर प्रतिपक्ष कांग्रेस के नेता अब भी भजनलाल सरकार को 'परची सरकार' की उपमा देते हुए हर काम के लिए दिल्ली की हरी झंडी के इंतजार का आरोप लगाते हैं। यहां तक आरोप लगा दिया जाता है कि नौकरशाहों के तबादले-पदस्थापन जैसे प्रशासनिक काम भी इस सरकार के हाथ में नहीं हैं। इसके लिए भी दिल्ली से हामी भरवानी पड़ती है। नतीजा यह है कि राज्य में नौकरशाही हावी होती जा रही है।

कई बार सरकार के अपने लोग भी दबी जुबान में इन आरोपों पर मुहर लगाते नजर आते हैं। मंत्री कहते हैं कि अफसर उनकी नहीं सुनते। विधायक कहते हैं कि मंत्री उनके काम नहीं करते। कार्यकर्ता दोनों जगहों से खाली हाथ लौटता है। हाल ही में प्रदेश में हुए तबादलों के दौर में भी ऐसे ही स्वर सत्ता पक्ष की ओर से ज्यादा सुनाई दिए थे। ऐसे में कहा जा सकता है कि तीन साल बाद भी भजनलाल प्रशासनिक से कहीं ज्यादा सियासी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं।

उपलब्धियां बनाम विपक्ष के दावे

सियासी विश्लेषक कहते हैं कि किसी भी सरकार का तीन वर्ष का कार्यकाल उसके नीतिगत दृष्टिकोण को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त होता है। भजनलाल सरकार ने सत्ता संभालते ही कुछ ऐसे संवेदनशील और बुनियादी मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया, जो पिछली सरकार के समय भाजपा के प्रमुख चुनावी हथियार बने थे। मसलन, पिछली अशोक गहलोत सरकार के वक्त प्रदेश में प्रतियोगी परीक्षाओं के लीक हुए पेपर बड़ा सियासी मुद्दा थे। भजनलाल ने आते ही इसे रोकने के लिए एसआईटी का गठन कर कार्रवाई शुरू की। भजनलाल आज भी इसे अपनी सरकार की बड़ी उपलब्धि बताते हैं कि तीन साल में हुई तीन सौ से अधिक परीक्षाओं में एक भी पेपर लीक नहीं हुआ।

इसी तरह राज्य के पूर्वी हिस्से में आने वाले 13 जिलों की जीवनरेखा मानी जाने वाली ईस्टर्न राजस्थान कैनाल प्रोजेक्ट (ईआरसीपी) को लेकर चला आ रहा अन्तरराज्यीय गतिरोध खत्म करते हुए केंद्र और मध्यप्रदेश सरकारों के साथ संशोधित एमओयू पर हस्ताक्षर भी एक उपलब्धि के रूप में गिनाए जाते हैं। साथ ही हरियाणा के साथ यमुना जल बंटवारे का दशकों से लम्बित पड़ा मुद्दा भी सुलझाने का दावा किया गया है। संगठित अपराधों पर नियंत्रण के लिए एंटी गैंगस्टर टास्क फोर्स बनाकर कार्रवाई कर कानून-व्यवस्था में सुधार का दावा भी सरकार का है तो निवेश के जरिए औद्योगिक विकास में राइजिंग राजस्थान के तहत बड़ा निवेश उपलब्धि कहा जा रहा है।

दूसरी ओर, इन नीतिगत फैसलों के बावजूद नौकरशाही के रवैये, निचले स्तर पर विकास कार्यों की सुस्त गति और सत्ता के विकेंद्रीकरण की कमी जैसी शिकायतें आम लोगों से लेकर खुद भाजपा कार्यकर्ताओं के स्तर तक उभरती रहती हैं। ईआरसीपी को केंद्रीय परियोजना घोषित करवाने की मांग पर सरकार को आज भी विपक्ष सदन और सड़क पर घेरता है तो यमुना जल बंटवारे के समझौते के पूरी तरह लागू होने पर संदेह जताया जा रहा है। आए दिन हो रही हत्याओं और लूटपाट की घटनाओं को गिनाते हुए कहा जा रहा है कि प्रदेश में कानून-व्यवस्था बुरी तरह लड़खड़ा चुकी है। कोटा, बीकानेर, बांसवाड़ा, जोधपुर व अन्य शहरों में प्रसूताओं की मौत और आरजीएचएस व निशुल्क दवाओं के मुद्दे पर चिकित्सा व्यवस्था को सवालों के घेरे में खड़ा किया जाता रहा है। देशभर में युवाओं के आंदोलन का सबब बने नीट पेपर लीक का राजस्थान लिंक पेपर लीक नहीं होने के सरकारी दावों पर पानी फेरता नजर आता है। पूर्व मुख्यमंत्री अशोक गहलोत कहते हैं कि प्रदेश में सरकार नाम की कोई चीज ही नहीं है। झूठे दावों से सिर्फ अपनी पीठ थपथपाने का काम किया जा रहा है। बिजली-पानी, सड़क-सीवरेज और कानून-व्यवस्था जैसे मुद्दों पर सरकार पूरी तरह नाकाम साबित हुई है।

गणित दिल्ली दौरों का

- प्रदेश के सियासी गलियारों में मुख्यमंत्री भजनलाल के दिल्ली दौरे हमेशा चर्चा में रहे हैं। मुख्यमंत्री के हर महीने औसतन दो से तीन दिल्ली दौरे हो ही जाते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो पूर्ववर्ती सरकारों के दौर में ऐसे दौरों की बारम्बारता कम नजर आती थी। फिर भजनलाल बार-बार दिल्ली दरबार में क्यों हाजिरी देते हैं? इस सवाल के जवाब में सरकार और भजन समर्थकों का तर्क है कि डबल इंजन सरकार की अवधारणा के चलते केंद्र प्रायोजित योजनाओं के त्वरित अनुमोदन, राजस्थान को अधिकाधिक वित्तीय मदद, जल व बिजली परियोजनाओं की स्वीकृतियों में तेजी तथा केंद्रीय मंत्रियों से सीधा नीतिगत संवाद मुख्यमंत्री के लगातार दिल्ली दौरों से लाभदायक साबित होता है।
- विश्लेषक इसे दूसरी नजर से देखते हैं। इनका कहना है कि प्रदेश में सत्ता के कई शक्ति केंद्र सक्रिय हैं। मंत्रिमंडल के प्रमुख फैसलों, वरिष्ठ नौकरशाहों के तबादलों, राजनीतिक नियुक्तियों व सत्ता-संगठन तालमेल जैसे हरेक संवेदनशील फैसले के लिए केंद्रीय नेतृत्व की सीधी सहमति इन दौरों का प्रमुख कारण है। साथ ही भजनलाल इन दौरों से अपने विरोधियों को लगातार यह संदेश देने की कोशिश भी करते हैं कि केंद्रीय नेतृत्व का उनकी पीठ पर हाथ है। यानी वे अपनी स्थिति आलाकमान के समर्थन से लगातार मजबूत रखना चाहते हैं ताकि उन्हें कोई सीधी चुनौती नहीं मिल सके। फिर, पहली बार विधायक बनने के बाद सीधे मुख्यमंत्री की कुर्सी मिल जाना और इसके कारण प्रशासनिक अनुभव की कमी को भी इन दौरों से जोड़ लिया जाता है।

सत्ता-संगठन में तालमेल

- सत्ता के शक्ति केंद्रों को साधने के साथ-साथ भजनलाल के लिए पार्टी संगठन के साथ तालमेल भी एक बड़ी चुनौती है। हालांकि अभी प्रदेश संगठन और सरकार के बीच एक औपचारिक तालमेल तो नजर आता है, लेकिन धरातल पर कुछ अंतर्विरोध भी परिलक्षित होते हैं। संगठन के पुराने कार्यकर्ताओं की दबी जुबान में शिकायत रहती है कि नौकरशाही के हावी हो जाने से कार्यकर्ताओं के छोटे-मोटे कामों को प्राथमिकता नहीं मिल पाती। ऐसे में जिला और मंडल स्तर पर सत्ता व संगठन के बीच तालमेल एक अहम मसला बना हुआ है।
- इसी तरह मंत्रिमंडल में भी कई अलग-अलग शक्ति केंद्र हैं। कम अनुभव वाले उपमुख्यमंत्रियों दीया कुमारी व प्रेमचंद बैरवा के साथ मंत्रिमंडल में कई कद्दावर चेहरे भी हैं, जिन्हें लम्बा विधायी और प्रशासनिक अनुभव है या फिर ये संघ और पार्टी के भीतर गहरा जनाधार रखते हैं। कई मंत्री तो इस मामले में मुख्यमंत्री से कहीं ज्यादा अनुभवी हैं। ऐसे मंत्रियों को केंद्रीय नेतृत्व व मुख्यमंत्री कार्यालय के स्तर से चलने वाली केंद्रीकृत निगरानी व्यवस्था असहज करती है तो मुख्यमंत्री के सामने भी कैबिनेट में निर्विवाद नेतृत्व स्थापित करने में परोक्ष रूप से परेशानी ही है।

वसुंधरा की खामोशी, मनोवैज्ञानिक दबाव

राजस्थान में भाजपा की राजनीति का प्रमुख चेहरा रही पूर्व मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे मौजूदा समय में प्रदेश के सियासी समीकरणों का सबसे पेचीदा अध्याय हैं। पार्टी की लगातार तीसरी बार राष्ट्रीय उपाध्यक्ष बनाई गई वसुंधरा राजे भले ही राज्य की राजनीति से एक तरह से बाहर की जा चुकी हैं, लेकिन वे सीधे किसी नीति या निर्णय पर सार्वजनिक विरोध करने की बजाय आज भी वक्त-बेवक्त अपनी व्यापक जनस्वीकार्यता और जनाधार को रेखांकित करती रहती हैं। राज्य के कई क्षेत्रों में उनके

निष्ठावान नेताओं, कार्यकर्ताओं और समर्थकों का मजबूत नेतृत्व सक्रिय है। यह भजनलाल शर्मा सरकार के लिए हमेशा एक अदृश्य मनोवैज्ञानिक दबाव की तरह काम करता है। बार-बार यह हूक उठती दिखती है कि आज वसुंधरा मुख्यमंत्री होतीं तो यह स्थिति नहीं होती। फिर पार्टी आलाकमान के लिए भी वसुंधरा के प्रभाव को पूरी तरह अनदेखा करना सम्भव नहीं हो पा रहा। इधर, वसुंधरा की खामोशी हर समय मुख्यमंत्री पर एक दबाव के रूप में हावी रहती है।

स्वतंत्र पहचान का संकट

क्या मुख्यमंत्री भजनलाल पौने तीन साल के कार्यकाल में अपनी स्वतंत्र पहचान बना पाए हैं? यह सवाल आज भी राजनीतिक विश्लेषकों के बीच सर्वाधिक विचारणीय है। इसमें कोई दो राय नहीं कि मुख्यमंत्री ने अपने कार्यकाल में सहज, सरल, मिलनसार और सुलभ जननेता की छवि बनाई है। वे कार्यकर्ताओं व आम लोगों से जनसुनवाई और सम्पर्क पोर्टल हेल्पलाइन से सीधा संवाद करने, ग्रामीण चौपाल के जरिए लोगों से जुड़ने और सामाजिक आयोजनों में आमजन के बीच सहजता से उपलब्ध होते हैं, लेकिन जब एक कठोर प्रशासक और सर्वमान्य क्षत्रप की बात आती है तो वे पीछे रह जाते हैं। आज भी आम लोगों में बनी यह धारणा तोड़ पाने में भजनलाल पूरी तरह सफल नहीं हो पाए हैं कि उनकी सरकार के सभी बड़े फैसलों की डोर दिल्ली दरबार के हाथ में है। वैसे भी स्वतंत्र सियासी पहचान सिर्फ व्यक्तिगत सरलता से नहीं, बल्कि कड़े राजनीतिक फैसलों, संकट प्रबंधन की क्षमता और विरोधियों पर निर्विवाद प्रभुत्व से स्थापित होती है। भजनलाल अब भी अपनी स्वतंत्र सियासी विरासत गढ़ने में संघर्षशील ही नजर आते हैं।

चुनौतियां व चुनावी बिसात

सरकार के आखिरी दो साल जनविश्वास हासिल करने की दिशा में काफी अहम साबित होते हैं। इस साल दिसम्बर में सरकार के तीन साल पूरे होने के बाद सरकार को अगले विधानसभा चुनाव की तैयारियों में भी जुटना होता है। इनमें से आखिरी छह महीने तो राजनीतिक चुनौतियां इतनी बड़ी हो जाती हैं कि वक्त इनसे निपटने में ही निकल जाता है। ऐसे में सरकार के पास अब मुश्किल डेढ़ साल का समय बचेगा और इसमें भजनलाल के सामने वित्तीय प्रबंधन, जल संकट का समाधान, रोजगार सृजन और आधारभूत ढांचे का

विकास जैसी प्रशासनिक जिम्मेदारियां कुशलता से पूरी करने की चुनौती है।

पार्टी के भीतर सभी गुटों और वरिष्ठ नेताओं को एक मंच पर साधे रखना, नौकरशाही पर मजबूत पकड़ साबित करना, साल 2028 के विधानसभा चुनावों से पहले पार्टी में खुद को एक निर्विवाद, जनप्रिय व सर्वस्वीकार्य नेता के रूप में स्थापित करना और दिल्ली पर अत्यधिक निर्भरता की आम धारणा को मिटाना मुख्यमंत्री भजनलाल के लिए किसी पहाड़ को तोड़ने जैसी चुनौती से कम नहीं है। ऐसे में क्या वे राजस्थान में हर पांच साल में कांग्रेस-भाजपा के पारम्परिक सत्ता परिवर्तन के चक्र को तोड़ने की पार्टी नेतृत्व की आकांक्षा पर खरा उतरकर नया इतिहास रच पाएंगे, इसका जवाब तो भविष्य के गर्त में छिपा है। फिलहाल, चुनौतियां बड़ी हैं और इनसे निपटते हुए चुनावी बिसात बिछाना नामुमकिन तो नहीं, लेकिन मुश्किल जरूर नजर आता है।

जीत के सूत्रों की बिगड़ रही ‘गणित’

राजेश कसेरा,
वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक

राजस्थान कांग्रेस में अशोक गहलोत, सचिन पायलट और गोविंदसिंह डोटासरा की अलग-अलग राजनीतिक ताकत और महत्वाकांक्षाएं पार्टी के लिए चुनौती बन रही हैं। 2028 से पहले निकाय-पंचायत चुनाव तीनों नेताओं के प्रभाव और आपसी तालमेल की अहम परीक्षा होंगे।

राजस्थान कांग्रेस की राजनीति में इस समय सबसे बड़ा सवाल भाजपा से मुकाबले का नहीं, बल्कि अपने ही तीन शक्ति केन्द्रों के बीच संतुलन का है। पूर्व मुख्यमंत्री अशोक गहलोत, पूर्व उप मुख्यमंत्री सचिन पायलट और प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष गोविंदसिंह डोटासरा, तीनों की अपनी राजनीतिक ताकत, महत्वाकांक्षा और समर्थकों का आधार है। समस्या तब पैदा होती है, जब ये ताकतें कांग्रेस की सामूहिक रणनीति के बजाय एक-दूसरे के समानांतर चलने लगती हैं। बीते दिनों पूर्व मंत्री महेन्द्रजीतसिंह मालवीय की ‘घर वापसी’ ने इसी खींचतान को एक बार फिर सतह पर ला दिया।

मालवीय के कांग्रेस में लौटने के बाद उनका पार्टी कार्यालय जाने के बजाय सीधे गहलोत के आवास पर पहुंचना प्रदेश अध्यक्ष डोटासरा को बुरी तरह खटका। ऊपर से वहां गहलोत को चौथी बार मुख्यमंत्री बनाए जाने के नारे गूंजे तो मामला और गरमा गया। इसके बाद डोटासरा ने गहलोत का सीधा नाम लिए बिना तल्ख टिप्पणी की, ‘यदि कोई अपना ब्रांड बनाने के लिए काम करता है तो उसे सफलता मिले। मैं कांग्रेस के लिए काम करता हूं। जब तक कांग्रेस में हूं, पार्टी के लिए काम करूंगा। मैं किसी व्यक्ति विशेष को ब्रांड बनाने के लिए काम नहीं करूंगा।’ इस बयान के पीछे कांग्रेस के भीतर चल रही उस पुरानी प्रतिस्पर्धा की झलक साफ दिखाई देती है, जिसमें सवाल सिर्फ आज के संगठन का नहीं, बल्कि 2028 के बाद राजस्थान की सत्ता में कांग्रेस का चेहरा कौन होगा, इसका भी है।

इधर, सचिन पायलट 2020 की राजनीतिक उठापटक को अब तक भुला नहीं पाए हैं। उस समय मुख्यमंत्री अशोक गहलोत से टकराव के बाद पायलट को प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष पद गंवाना पड़ा था। ऐसे में पायलट और उनके समर्थक भी मौके की तलाश में हैं। राजनीति में मौका जब आता है तो पुराने हिसाब-किताब भी अक्सर सामने आ जाते हैं।

मुद्दा सिर्फ मतभेद नहीं, सत्ता की अगली लड़ाई है

राजस्थान कांग्रेस में गहलोत, पायलट और डोटासरा के बीच खींचतान को केवल व्यक्तिगत मतभेद मानना राजनीतिक तस्वीर को अधूरा समझना होगा। असल संघर्ष संगठन पर प्रभाव, राजनीतिक वर्चस्व, भविष्य की भूमिका और सबसे बढ़कर 2028 के विधानसभा चुनाव के बाद मुख्यमंत्री पद की दावेदारी का है।

कांग्रेस के भीतर यह सवाल अभी औपचारिक रूप से भले न पूछा जा रहा हो, लेकिन राजनीतिक गतिविधियां संकेत दे रही हैं कि दावेदारियां आकार लेने लगी हैं। तीन बार मुख्यमंत्री रह चुके गहलोत के पास प्रशासनिक अनुभव के साथ संगठन का लंबा नेटवर्क है। पायलट के पास युवा चेहरा, व्यक्तिगत लोकप्रियता और भविष्य के नेतृत्व की संभावना है। डोटासरा के पास प्रदेश संगठन की कमान व कार्यकर्ताओं के बीच सक्रिय संपर्क है। यानी तीनों के पास वह सब कुछ है, जो उन्हें मुख्यमंत्री पद की संभावित दौड़ में प्रासंगिक बनाए रखता है। यही कांग्रेस की ताकत भी है और यही उसकी सबसे बड़ी चुनौती भी।

बीते समय में कई कार्यक्रमों और संगठनात्मक गतिविधियों में तीनों नेताओं की दूरी दिखाई दी। जुलाई 2026 में भी गहलोत और पायलट कई प्रमुख कार्यक्रमों में एक साथ नहीं दिखे। पायलट के कार्यक्रमों के पोस्टरों में गहलोत और डोटासरा की तस्वीरों की गैरमौजूदगी ने राजनीतिक संदेश दिया। दूसरी ओर, राहुल गांधी के राजस्थान दौरे के दौरान तीनों नेताओं को एक मंच पर दिखाने वाली तस्वीरों ने यह संदेश देने की कोशिश जरूर की कि मतभेदों के बावजूद पार्टी एकजुट है। लेकिन दौरा खत्म होते ही तीनों नेताओं की अपनी-अपनी राजनीतिक गतिविधियां फिर अलग-अलग नजर आने लगीं।

3 शक्ति केन्द्र, एक पार्टी

गहलोत और पायलट के बीच प्रतिस्पर्धा पुरानी कहानी है। इसमें अब डोटासरा एक महत्वपूर्ण तीसरे शक्ति केन्द्र के रूप में उभरे हैं। प्रदेश अध्यक्ष के रूप में डोटासरा ने संगठन को सक्रिय रखने और कार्यकर्ताओं के साथ सीधा संपर्क बनाए रखने पर जोर दिया है। छह साल के कार्यकाल ने उन्हें संगठन के भीतर एक अलग आधार दिया है। वे सरकार के खिलाफ लगातार मुखर रहते हैं।

गहलोत की राजनीति का आधार अनुभव और व्यापक नेटवर्क है। पायलट की राजनीति का आधार व्यक्तिगत जन अपील और युवा नेतृत्व की छवि है। डोटासरा की ताकत संगठन और कार्यकर्ताओं से सीधा संपर्क है। तीनों की ताकत अलग-अलग है, लेकिन यदि ये तीनों ताकतें एक-दूसरे से मुकाबला करने में लग गईं तो पार्टी की सामूहिक ताकत कमजोर होगी। इसके उलट यदि इन्हें एक साझा चुनावी रणनीति में जोड़ा गया तो यही समीकरण भाजपा के लिए मुश्किल खड़ी कर सकता है। यही वह बिंदु है जहां राजस्थान कांग्रेस के सामने सबसे बड़ी राजनीतिक परीक्षा खड़ी है।

निकाय-पंचायत चुनाव पहला इम्तिहान

- प्रदेश में निकाय और पंचायत चुनाव कांग्रेस के लिए सिर्फ स्थानीय चुनाव नहीं हैं। 2028 के विधानसभा चुनाव से पहले इन्हें सत्ता का सेमीफाइनल माना जाएगा। इन चुनावों में पार्टी का प्रदर्शन यह संकेत देगा कि संगठन जमीन पर कितना मजबूत है, किस नेता की पकड़ कितनी है और कार्यकर्ता किसके साथ कितनी मजबूती से खड़ा है। यहीं तीनों नेताओं की वास्तविक परीक्षा भी होगी।
- टिकट वितरण से लेकर स्थानीय नेतृत्व को साधने और चुनावी अभियान तक, हर स्तर पर यह देखा जाएगा कि तीनों नेता पार्टी की साझा रणनीति के तहत काम करते हैं या अपने-अपने राजनीतिक प्रभाव क्षेत्र को मजबूत करने में जुटते हैं।
- यदि निकाय और पंचायत चुनाव में कांग्रेस एकजुट होकर अच्छा प्रदर्शन करती है तो यह 2028 के लिए मजबूत संदेश होगा। लेकिन यदि टिकटों और स्थानीय नेतृत्व को लेकर गुटबाजी सामने आई तो नुकसान सिर्फ इन चुनावों तक सीमित नहीं रहेगा। इससे लगेगा कि कांग्रेस वापसी से पहले ही मुख्यमंत्री पद की दौड़ में उलझ गई है।

सत्ता पक्ष को बैठे-बिठाए मुद्दा

- कांग्रेस की अंदरूनी खींचतान भाजपा के लिए राजनीतिक अवसर है। विपक्ष के लिए इससे बेहतर मुद्दा क्या होगा कि जिस पार्टी को सत्ता में वापसी का दावा करना है, उसके तीन बड़े नेता ही अलग-अलग शक्ति केन्द्र बनकर खड़े दिखाई दें।
- भाजपा चुनाव में कांग्रेस के मतभेदों को गुटबाजी और मुख्यमंत्री पद की महत्वाकांक्षा के मुद्दे के रूप में जनता के सामने रख सकती है। कांग्रेस के सामने चुनौती यह है कि जनता को यह भरोसा दिलाया जाए कि पार्टी के भीतर नेतृत्व की प्रतिस्पर्धा, संगठन की सामूहिक लड़ाई पर हावी नहीं होगी।
- राजनीति में मतभेद होना सामान्य है। समस्या तब होती है, जब मतभेद सार्वजनिक संदेश बन जाएं और कार्यकर्ता असमंजस में पड़ जाएं कि आखिर पार्टी की लाइन क्या है।

गहलोत, पायलट और डोटासरा, तीनों की अपनी जमीन

जादूगर अशोक गहलोत : गहलोत की ताकत उनका लंबा राजनीतिक और प्रशासनिक अनुभव है। प्रदेश की राजनीति के साथ-साथ कांग्रेस संगठन में भी उनका व्यापक नेटवर्क है। चुनावी राजनीति की बारीकियों को समझने और आखिरी समय में समीकरण बदलने की उनकी क्षमता को उनके समर्थक उनकी बड़ी ताकत मानते हैं। यही वजह है कि उन्हें राजस्थान की राजनीति का 'जादूगर' कहा जाता है। वे भले ही उम्र के लिहाज से पुराने खिलाड़ी हों, लेकिन राजनीति से उनका बाहर होना अभी आसान नहीं दिखता।

युवा सचिन पायलट : पायलट कांग्रेस के भीतर सबसे चर्चित युवा चेहरा हैं। युवाओं के बीच उनकी लोकप्रियता और व्यक्तिगत राजनीतिक पहचान उनकी पूंजी है। 2018 के विधानसभा चुनाव में प्रदेश अध्यक्ष के रूप में कांग्रेस को सत्ता तक पहुंचाने में उनकी भूमिका ने कार्यकर्ताओं के बीच उनका आधार मजबूत किया। मुख्यमंत्री पद को लेकर 2018 में जो फैसला हुआ, उसकी कसक पायलट समर्थकों के बीच आज भी है। 2020 की बगावत के बाद भी पायलट का राजनीतिक प्रभाव पूरी तरह खत्म नहीं हुआ, बल्कि उनकी दावेदारी और अधिक स्पष्ट हुई है।

तेज-तर्रार गोविंदसिंह डोटासरा : डोटासरा की बड़ी ताकत संगठन है। प्रदेश अध्यक्ष के रूप में लंबे समय तक काम करने से कार्यकर्ताओं और संगठन के पदाधिकारियों के बीच उनकी सीधी पहुंच है। शेखावाटी की राजनीति में उनकी मजबूत पकड़ है और वे पार्टी के मुद्दों को आक्रामक अंदाज में उठाने के लिए जाने जाते हैं। यही तेवर उनकी राजनीतिक पहचान का हिस्सा भी है। अब सवाल यह है कि संगठन पर उनकी पकड़ को वे भविष्य की मुख्यमंत्री पद की दावेदारी में कितना बदल पाते हैं।

राहुल की तारीफ से आगे की असली परीक्षा

राहुल गांधी की ओर से डोटासरा और नेता प्रतिपक्ष टीकाराम जूली की प्रशंसा संगठन के लिए उत्साह का संकेत हो सकती है, लेकिन इससे मुख्यमंत्री पद की दौड़ का फैसला नहीं होता। विधानसभा चुनाव अभी दूर हैं और कांग्रेस के भीतर कई राजनीतिक समीकरण बदल सकते हैं।

डोटासरा की चुनौती यह है कि संगठन पर पकड़ को व्यापक जनाधार में बदलें। पायलट के सामने चुनौती अपनी व्यक्तिगत लोकप्रियता को संगठन की सामूहिक ताकत में बदलने की है। गहलोत के सामने चुनौती यह है कि लंबे राजनीतिक अनुभव और नेटवर्क को भविष्य की भूमिका के अनुरूप कैसे इस्तेमाल करें। इसलिए अभी किसी एक नेता को रेस में आगे या पीछे बताना जल्दबाजी होगी। असली मुकाबला आने वाले समय में उनके राजनीतिक प्रदर्शन, संगठनात्मक प्रभाव और चुनावी उपयोगिता से तय होगा।

यहीं से बनेगी जीत की 'गणित'

राजस्थान में हर पांच साल में सत्ता बदलने का पैटर्न कांग्रेस के लिए उम्मीद जरूर जगाता है, लेकिन केवल सत्ता विरोधी माहौल से सत्ता में वापसी सुनिश्चित नहीं होती। उसके लिए संगठन, नेतृत्व और चुनावी रणनीति तीनों का एक दिशा में होना जरूरी है। कांग्रेस के सामने आज यही सबसे बड़ा सवाल है, क्या गहलोत का अनुभव, पायलट की लोकप्रियता और डोटासरा की संगठनात्मक ताकत एक-दूसरे को काटेंगी या एक-दूसरे के पूरक बनेंगी? यदि तीनों अपने-अपने राजनीतिक प्रभाव को कांग्रेस की सामूहिक ताकत में बदल पाए तो पार्टी के लिए 2028 की लड़ाई आसान हो सकती है। कांग्रेस के लिए असली खतरा तीन नेताओं का होना नहीं है। खतरा यह है कि तीन शक्ति केन्द्र तीन अलग-अलग दिशाओं में खिंचने लगें। 2028 की सत्ता की लड़ाई भाजपा से बाद में होगी। उससे पहले राजस्थान कांग्रेस को अपने ही तीन शक्ति केन्द्रों के बीच संतुलन साधना होगा। यही संतुलन तय करेगा कि जीत की 'गणित' कांग्रेस के पक्ष में बनेगी या उसकी अपनी खींचतान उसे फिर सत्ता से दूर कर देगी।

संसद में संवाद की जगह शोर

मानसून सत्र में संसद का बड़ा हिस्सा हंगामे, विरोध और बहिष्कार की भेंट चढ़ गया। सत्ता पक्ष और विपक्ष ने एक-दूसरे पर सदन न चलने देने के आरोप लगाए, लेकिन सवाल जनता के धन और लोकतांत्रिक व्यवस्था का है। संसद में बहस और जवाबदेही के बजाय लगातार व्यवधान लोकतंत्र के लिए गंभीर चिंता का विषय है।

राधा रमण,
वरिष्ठ पत्रकार

संविधान निर्माताओं ने संसद की परिकल्पना इसलिए नहीं की थी कि वह विरोध के नाम पर अशांति और शोरगुल का केंद्र बन जाए। संसद के संचालन में जनता का पैसा खर्च होता है। वह भी प्रति मिनट करीब ढाई लाख रुपये। भारत जैसे गरीब देश के लिए यह रकम कम नहीं है। संसद को भारतीय लोकतंत्र का मंदिर माना जाता रहा है। वहां देशभर से जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधि देश, समाज और जनता की भलाई के लिए नीति-निर्धारण का काम करते हैं। बाद में कार्यपालिका उसे अमलीभूत करती है। संविधान निर्माताओं ने भारतीय लोकतंत्र के चार स्तंभ बताए थे– विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका और प्रेस। इन चार स्तंभों के काम भी बांटे गए थे। विधायिका का काम नीति-निर्धारण करना, कार्यपालिका का उसपर अमल करना, न्यायपालिका का काम यह देखना कि नीति-निर्धारण और उसके कार्यान्वयन में कोई चूक तो नहीं हो रही है और प्रेस का काम उसे जन-जन तक पहुंचाना और समाज की समस्याओं को उजागर करना है।

ऐसा नहीं है कि संसद सिर्फ हंगामें की जगह रही है। वहां पंडित जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, वीके कृष्णमेनन, डॉ भीमराव अंबेडकर, डॉ श्यामाप्रसाद मुखर्जी, जेबी कृपलानी, लालबहादुर शास्त्री, डॉ राममनोहर लोहिया आदि एक से बढ़कर एक विद्वान और मनीषी बैठकर देश की दिशा तय करते रहे। संसद के उच्च सदन राज्यसभा में भी कई उद्योगपति, साहित्यकार, कलाकार सदन की गरिमा को सुशोभित करते रहे। तब संसद की कार्यवाही देखते- सुनते बनती थी। 80 के दशक तक संसद की बहसें जन सरोकारी लगती थीं। लेकिन बाद के दिनों में जैसे-जैसे राजनीति का अपराधीकरण होता गया, वैचारिक दिवालियापन और सांसदों की सुख-सुविधा (वेतन-भत्ता-पेंशन) बढ़ती गई, संसद की गरिमा का क्षरण होता गया।

25 दिनों में महज 9 मिनट चला प्रश्नकाल

इस बार भी संसद का मानसून सत्र 20 जुलाई से 13 अगस्त तक चला। कुल 25 दिन चले सत्र का अधिकांश समय शोरगुल और विपक्ष के बहिष्कार में बीत गया। दोनों सदनों लोकसभा और राज्यसभा की कार्यवाही बार-बार बाधित हुई। हमारे जनप्रतिनिधि जनता के सवालों को लेकर कितने गंभीर हैं, इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि 25 दिनों में प्रश्नकाल महज 9 मिनट ही चल पाया। यह भी बताना जरूरी लगता है कि मानसून सत्र के आयोजन में करीब 225 करोड़ रुपये खर्च किए गए। संसदीय कार्य मंत्री किरेन रिजिजू ने बताया कि लोकसभा में कामकाज 19 फीसदी, जबकि राज्यसभा में 39 फीसदी ही हो पाया। उन्होंने बताया कि ऐसा विपक्ष के चर्चा से बार-बार भाग जाने के कारण हुआ। लोकसभा में कुल 12 विधेयक पारित किए गए, जबकि एक विधेयक पर चर्चा की गई। राज्यसभा में सभी विधेयकों पर चर्चा की गई। रिजिजू ने कहा कि अपने संसदीय जीवन में उन्होंने पहली बार विपक्ष को चर्चा से भागते देखा। यह दुर्भाग्यपूर्ण है। संसदीय कार्य मंत्री ने इतने हंगामे के बीच 12 विधेयक पारित करा लेना अपनी सरकार की उपलब्धि बताया।

दूसरी ओर, विपक्ष का कहना है कि सरकार की मनमानी के कारण सदन चलने में दिक्कत हुई। सरकार बिना चर्चा के मनमानी करने पर तुली हुई है। विपक्ष को अपनी बात कहने का मौका ही नहीं दिया जाता है। विपक्ष 20 जुलाई को संसद का घेराव कर रहे छात्रों पर बर्बर लाठीचार्ज, पेलेट गन से हमला और छात्राओं के कपड़े फाड़े जाने का मुद्दा उठाना चाहता था। वह गृहमंत्री से सफाई चाहता था, लेकिन संसद भवन में मौजूद रहने के बावजूद गृहमंत्री सदन में नहीं आए। ऐसे में विपक्ष सदन का बहिष्कार नहीं करता तो क्या करता? विपक्ष अयोध्या के राममंदिर में हुए चढ़ावा चोरी का मामला उठाना चाहता था, क्योंकि सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर श्रीराम जन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र ट्रस्ट का गठन सरकार ने किया था। इसलिए ट्रस्ट के काम में गड़बड़ी के मामले की शिकायत सरकार से नहीं तो किससे की जाती। क्या ही अच्छा होता प्रधानमंत्री राममंदिर के मसले पर विपक्ष के सवालों का जवाब देते और देशवासियों को संतुष्ट करते। लेकिन प्रधानमंत्री दिल्ली में मौजूद होने के बाद भी सदन में नहीं आए। दरअसल, इस सरकार को लोकतंत्र पर भरोसा ही नहीं है। सरकार तानाशाह हो गई है। कांग्रेस सांसद तारिक अनवर कहते हैं कि सदन तभी चलता है जब सत्तापक्ष और विपक्ष आपस में बातचीत करें और सदन चलाने का रास्ता ढूंढें, लेकिन सरकार ने अपनी हठधर्मिता नहीं छोड़ी। प्रधानमंत्री और गृहमंत्री पूरे सत्र सदन में उपस्थित नहीं हुए। इससे पता चलता है कि उनके लिए सदन का कोई महत्त्व नहीं है।

संसद चलाने में प्रतिदिन 9 करोड़ से ज्यादा खर्च

वर्ष 2012 में तत्कालीन संसदीय कार्य मंत्री पवन कुमार बंसल ने बताया था कि संसद चलाने में प्रति मिनट 2.5 लाख का खर्च आता है। इनमें सांसदों के वेतन-भत्ते भी शामिल हैं। आमतौर पर संसद की बैठकें प्रतिदिन 11 बजे से शाम 6 बजे तक होती है। कभी-कभी विशेष परिस्थितियों में संसद की कार्यवाही आधी रात तक भी चलती है। अगर प्रतिदिन 6 घंटे के सदन के कार्यकाल की गणना की जाए तो यह प्रतिदिन 9 करोड़ रुपए से ज्यादा बैठती है। ज्ञात रहे कि 2012 के बाद पिछले 14 सालों का कोई अनुमान अभी तक नहीं आया है।

पारित किए गए विधेयक

संसद में लोक परीक्षाओं में पेपर लीक से जुड़ी छात्रों की चिन्ताओं को दूर करने के लिए लोक परीक्षा (अनुचित साधन निवारण) संशोधन विधेयक पारित किया गया। इस विधेयक में लोक परीक्षा प्रणाली की ईमानदारी और विश्वसनीयता को मजबूत करने की एक बड़ी पहल के रूप में पुनःस्थापित किया गया, ताकि 2024 के मूल अधिनियम को संशोधित किया जा सके। इस विधेयक का उद्देश्य अधिनियम के तहत परीक्षा में कदाचार संबंधी अपराधों की त्वरित जांच और समय पर ट्रायल सुनिश्चित करना, राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों को स्पेशल ट्रायल पक्का करना, राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों को स्पेशल फास्ट ट्रैक कोर्ट बनाने और स्पेशल पब्लिक प्रोसिक्यूटर नियुक्त करने का अधिकार देना, दो महीने के अन्दर जांच और तीन महीने के अन्दर ट्रायल पूरा करना, केंद्र सरकार को जहां भी जरूरी हो जांच के लिए स्पेशल टास्क फोर्स गठित करने में मदद करना, परीक्षा संबंधी अपराधों के लिए सजा में बढ़ोत्तरी करना और उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच के समक्ष एक समयबद्ध अपीली तंत्र का उपबंध करना है। ख़ास बात यह कि इस विधेयक में परीक्षा में पेपर लीक रोकने की कोई ठोस व्यवस्था का कहीं कोई जिक्र नहीं है, जबकि कॉकरोच जनता पार्टी के बैनर तले आंदोलन करनेवाले छात्रों की यही मुख्य मांग थी। करीब 17 घंटे की बहस के बाद यह विधेयक न सिर्फ दोनों सदनों से पारित हो गया, बल्कि राष्ट्रपति ने भी इसकी मंजूरी दे दी है।

इसके अलावा सात विधेयक महज 36 मिनट में ही दोनों सदनों से बिना किसी चर्चा के पारित कर दिए गए। जो विधेयक पारित किए गए, वे हैं-

सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम विकास (संशोधन) विधेयक 2026

इसका उद्देश्य वर्ष 2006 के अधिनियम में संशोधन करके सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों के निःशुल्क और स्वैच्छिक पंजीकरण के लिए एक राष्ट्रीय डिजिटल प्लेटफार्म पर उपलब्ध कराना, वित्तीय पहुंच को बेहतर बनाकर एमएसएमई सेक्टर को मजबूत करना, सूक्ष्म और छोटे व्यापार के विलंबित भुगतान से पैदा विवादों का तेजी से निपटारा करना, व्यापार करने में आसानी को बढ़ावा देना और कुछ नियमों के उल्लंघन से जुड़े अपराधों में सजा कम करने का प्रावधान है।

बैंककार बही साक्ष्य विधेयक 2026

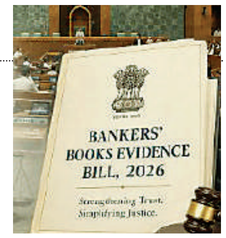

इसका उद्देश्य बैंककार बही की परिभाषा का दायरा बढ़ाना है, ताकि इसमें बैंकों द्वारा रखे जाने वाले सभी तरह के रिकॉर्ड शामिल हो सकें, चाहे वे फिजिकल, इलेक्ट्रॉनिक, डिजिटल, वर्चुअल, क्लाउड बेस्ट या किसी और रूप में हों। यह विधेयक केंद्र सरकार को वित्तीय क्षेत्र में कवरेज बढ़ाने का अधिकार देता है।

कराधान और अन्य विधियां (संशोधन) विधेयक 2026

यह विधेयक 5 जून 2026 को जारी आयकर (संशोधन) अध्यादेश को निरस्त करके उसके स्थान पर नया अध्यादेश लाने की स्वीकृति प्रदान करता है।

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (संशोधन) विधेयक 2026

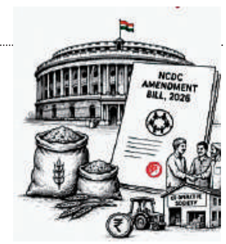

इस विधेयक का उद्देश्य राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम अधिनियम 1962 में संशोधन करके केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित की जाने वाली किसी भी दूसरी खाद्य वस्तु को खाद्य पदार्थों की सूची में शामिल करने के लिए उसकी परिभाषा बढ़ाना, औद्योगिक सामानों पर लागू भौगोलिक रोक को हटाना, सहकारिता क्षेत्र को मजबूत करना और निगम को आकस्मिक अधिकार देना है।

केरल (नाम परिवर्तन) विधेयक 2026

इस विधेयक में संविधान के अनुच्छेद- 3 के अनुसार केरल राज्य का नाम बदलकर केरलम करके संविधान की पहली अनुसूची में संशोधन करने का प्रस्ताव है।

अधिकरण सुधार विधेयक 2026

इस विधेयक को लाने का मकसद विभिन्न अधिकरणों के अध्यक्षों और सदस्यों की योग्यता, नियुक्ति, सेवा की शर्तों और कामकाज की दक्षता में सुधार करना है।

खान और खनिज (विकास और विनियमन) संशोधन विधेयक 2026

इस विधेयक में खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम 1957 में संशोधन करके खनिज के क्षेत्र वित्तीय प्रणाली में निश्चितता और स्थिरता तथा पूर्वानुमान का उपबंध करना है, जिससे देश के आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलेगा। साथ ही आत्मनिर्भर भारत के लक्ष्य पूरे होंगे और विकसित भारत 2047 का विजन हासिल होगा।

अन्य पारित विधेयक

राष्ट्रीय गौरव अपमान निवारण (संशोधन) विधेयक 2026

इसका उद्देश्य वर्ष 1971 के मूल अधिनियम में संशोधन कर उसे राष्ट्रीय गौरव अपमान निवारण अधिनियम की धारा 3 के दायरे में लाना है। साथ ही यह उपबंध करना है कि जान-बूझकर वंदेमातरम् जिसे राष्ट्रीय गीत माना जाता है, उसे गाने से रोकना या अवरोध करना दंडनीय अपराध होगा।

जन्म और मृत्यु रजिस्ट्रीकरण (संशोधन) विधेयक 2026

इसमें 1969 के मूल अधिनियम में संशोधन करके नियमों को सख्त बनाने का प्रावधान किया गया है। इसके तहत जन्म और मृत्यु के तुरंत बाद रजिस्ट्रेशन न कराने पर एक से दो वर्ष तक रजिस्ट्रीकरण केवल सक्षम एग्जीक्यूटिव मजिस्ट्रेट की मंजूरी से और दो वर्ष के बाद केवल फर्स्ट क्लास ज्युडिशियल मजिस्ट्रेट की मंजूरी से कराने का प्रावधान किया गया है।

उच्चतम न्यायालय (न्यायाधीश संख्या) संशोधन विधेयक 2026

इसके तहत सर्वोच्च न्यायालय में मुख्य न्यायाधीश सहित कुल जजों की संख्या 34 से बढ़ाकर 38 करने का प्रावधान है। इसका उद्देश्य मुकदमों के बढ़ते बैकलॉग को कम करके न्याय में तेजी लाना है।

भारतीय सांख्यिकी संस्थान विधेयक 2026

यह विधेयक कोलकाता स्थित भारतीय सांख्यिकी संस्थान को 1959 के अधिनियम को निरस्त कर पंजीकृत सोसायटी से आईआईटी और आईआईएम की तर्ज पर एक वैधानिक कॉर्पोरेट निकाय बनाता है। यह विधेयक लोकसभा में रखा गया था, लेकिन शोरगुल में चर्चा नहीं हो पाई।

विनियोग (संख्यांक-3) विधेयक 2026

यह विधेयक वित्त वर्ष 2022-23 के दौरान स्वीकृत राशि से अधिक हुए खर्च लगभग 54,067 करोड़ को देश की संचित निधि से पूरा करने के लिए कानूनी मंजूरी देता है।

इसके अलावा संसद के सदस्यों की सहमति न बन पाने के कारण विदेशी अभिदाय (विनियमन) संशोधन (FCRA) विधेयक 2026 को विस्तृत परीक्षण के लिए दोनों सदनों की संयुक्त समिति (जेपीसी) को भेजा गया। साथ ही सरकार महत्वपूर्ण परिसीमन विधेयक को संसद के पटल पर रखने की हिम्मत नहीं जुटा पाई। बताना जरूरी है कि सरकार की मंशा सत्र के पहले दिन से परिसीमन विधेयक को पारित कराने की रही है। इसी के लिए तृणमूल कांग्रेस, शिवसेना (उद्धव गुट) और आम आदमी पार्टी के सांसदों को एनडीए में शामिल कराया गया था। कुल मिलाकर मानसून सत्र में संसद और हमारे सांसदों की स्थिति 'आए थे हरिभजन को, ओटन लगे कपास' की ही रही।

कॉपीकैट नहीं, विवेकशील बनें

डॉ. गौरव बिस्सा,
मैनेजमेंट ट्रेनर

हर व्यक्ति अद्वितीय है, अलग है और सम्पूर्ण प्रकृति से कहीं न कहीं कनेक्टेड है। इसका अभिप्राय है कि जब हर व्यक्ति विशिष्ट है, अद्भुत है तो फिर वह दूसरों जैसा बनने का प्रयास क्यों करे? पूरे विश्व में किन्हीं दो व्यक्तियों के फिंगरप्रिंट आपस में एक जैसे नहीं होते। इसका अर्थ है हर व्यक्ति अद्भुत है और ईश्वर ने उसे कुछ नया करने को भेजा है। यदि ऐसा है तो किसी की नकल कर भेड़चाल में क्यों उलझना?

जीवन में अनेक समस्याओं का कारण है- खुद को न पहचानकर, दूसरों जैसा बनने की चाहत पालना। खुद की तुलना दूसरों से करना। यह गलत है। गाय घास खाती है और पुष्ट हो जाती है, लेकिन अगर श्वान घास खाता है तो वह मर जाता है। जो वस्तु एक के लिए अमृत है, वही दूसरे के लिए विष हो सकती है। सबका अपना जीवन, प्राथमिकताएं और इच्छाएं हैं। दूसरे का व्यक्तित्व, कृतित्व और सामाजिक स्थिति आपसे भिन्न है तो तुलना काहे की? ईश्वर ने आपको जो उपहार, प्रतिभा और शक्ति दी है, उस पर ध्यान दें, दूसरों को मिले आशीर्वाद से ईर्ष्या न करें और भेड़चाल में न पड़ें। भेड़चाल या नकल इंसान की सर्जनात्मक शक्ति खत्म कर देती है।

क्या है भेड़चाल?

भेड़ बनने का अर्थ है बिना सोचे समझे किसी भी व्यक्ति, सिद्धांत या कार्य को फॉलो करना। कोई सिद्धांत भले ही अपने व्यक्तित्व से मेल खाए या न खाए, अच्छा लगे या न लगे; फिर भी उसे सिर्फ इसलिए स्वीकारना क्योंकि अन्यजनों ने भी इसे स्वीकार किया हुआ है। वर्तमान युवा इस बीमारी में त्रस्त है। "फीयर ऑफ़ मिसिंग आउटः फोमा" यानी "कहीं मैं अकेला न पड़ जाऊं" के भय से कुछ भी स्वीकार लेना गलत है। अकेले पड़ जाने के इस भय और आत्मविश्वास की कमी के चलते आज युवा वर्ग भेड़ बनने की ओर अग्रसर है। मैनेजमेंट की कहावत है, "नेवर इमीटेट, ऑलवेज क्रीएट।" यानि सृजन करें और नया सोचें। "सभी दिशाओं से उत्तम विचार मेरे मस्तिष्क में आते रहें", यह तो भारतीय दर्शन का प्राणसत्त्व है। अतः नए विचारों का स्वागत करना और खुद को किसी परिपाटी में न बांधना आज की आवश्यकता है।

क्या कहता है शोध?

- लियोन फेस्टिंगर की सोशल कम्पेरिजन थ्योरी के अनुसार, लोग खुद का मूल्यांकन करने के लिए दूसरों से तुलना करते हैं। जब यह तुलना "अपवर्ड कम्पैरिजन" अर्थात अपने से बेहतर दिखने वाले लोगों की नकल करने की ओर ले जाती है; तो इससे ईर्ष्या, हीनभावना और चिंता जन्म लेती है।
- अल्बर्ट बंडुरा की सोशल लर्निंग थ्योरी के डॉल एक्सपेरिमेंट के अनुसार, जो लोग बिना विवेक के दूसरों का अनुकरण करते हैं तो वे अपनी "सेल्फ एफिकेसी" अर्थात खुद की क्षमता पर भरोसा करने की शक्ति खो देते हैं।

कथा कौवे की... एक कौवे को अपने काले कलूटे रूप से नफरत थी। एक दिन उसने कहीं मोरपंख पड़े देखे। स्वयं को तो वह मोरों से कमज़ोर समझता ही था। ऐसे में उसने कुछ मोरपंख अपनी पूंछ के पास चिपका दिए और सभी से कहने लगा कि वो भी मोर है। यह बात मोरों को नागवार गुज़री, क्योंकि उसने नक़ल की थी। अतः मोरों ने उसे पीटा। अब कौवा इसकी शिकायत लेकर प्रधान कौवे के पास गया तो प्रधान कौवे ने कहा कि जिस कौवे को अपने कुल और राष्ट्र पर ही गर्व नहीं है तो ऐसे कौवे का क्या मोल? अतः कौवों ने भी उस नकलची कौवे की पिटाई कर डाली। संकेत समझें कि बिना अकल के की गई नकल मुसीबत में डाल सकती है।

ज़रा सोचिये। शेर और शार्क दोनों पेशेवर शिकारी हैं, लेकिन शेर महासागर में शिकार नहीं कर सकता और शार्क जंगल में शिकार नहीं कर सकती। अब क्या यह कहना तर्कसंगत लगता है कि शेर चूंकि सागर में शिकार नहीं कर सकता, अतः वो तो बेकार है? शायद नहीं। यही स्थिति हमारी है। हम भी किसी न किसी कार्य में उत्कृष्ट होते ही हैं। आवश्यकता उस उत्कृष्टता को पहचानने की है।

नियंता कौन?... अपने जीवन को दूसरों द्वारा नियंत्रित होने देने का अर्थ है आत्मविश्वास में कमी। यह कमी ही मनुष्य को गलत और अवांछनीय कार्यों की ओर अग्रसर करती है। दूसरों द्वारा नियंत्रित कठपुतली न बनें। युवाओं में नशे की प्रवृत्ति, अनैतिक कार्य करने में सहमति के पीछे सबसे बड़ी वजह भेड़ बनना ही है। नशे की प्रवृत्ति की जन्मदाता; भेड़ बनने की प्रवृत्ति ही है। यह मानसिक गुलामी का संकेत है। मानसिक दासता से ग्रस्त न हों। दासता का अर्थ है कि आपके स्वयं के तो कोई विचार हैं ही नहीं? आपकी कोई सोच है ही नहीं। आपको कोई भी बरगला सकता है। सही और गलत में भेद करने की अपने विवेक की ताकत का इस्तेमाल किए बगैर किसी की भी बात मान लेना क्या खुद को धोखा देना नहीं है? भीड़ में अकेले खड़े होकर सही को सही और गलत को गलत कहने का साहस विकसित करना ही मनुष्य होना है। रीढ़ की हड्डी को इतना भी लचीला न बनाएं कि सीधा खड़ा होना ही दुश्वार लगे। स्वयं पर विश्वास रखें और भेड़ होने से बचें। यही जीवन मन्त्र है।

प्रेरणादायी नेतृत्व को

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

भारत के माननीय प्रधानमंत्री

श्री नरेंद्र मोदी ज

को जन्मदिन की हार्दिक
बधाई एवं शुभकामनाएँ।

17 सितंबर — राष्ट्रसेवा के स

प्रेरणा देने वाला सार्वजनिक जीवन

देश के विकास, सुशासन और जनकल्याण के लिए निरंतर समर्पित श्री मोदी जी का सार्वजनिक जीवन करोड़ों देशवासियों को प्रेरणा मिलत है। उनका दृढ़ संकल्प, कार्य के प्रति प्रतिवद्धता और राष्ट्रहित को सर्वोपरि प्राथमिकता देने का भाव भारतीय लोकतांत्रिक जीवन में एक विशिष्ट पहचान रखता है।

विकास और
की नई ऊंचा

उनके नेतृत्व में भारत ने विकास, नवा
वैश्विक स्तर पर अपनी भूमिका को
उपलब्धियों अर्जित की हैं। समाज के
लाभ पहुंचाने तथा आत्मनिर्भर और
दिशा में किए जा रहे प्रयास

श्री नरेंद्र मोदी जी को
जन्मदिन की हार्दिक बधाई एवं अनंत शुभकामना

ी

ी

ई

जी

“सबका साथ,
सबका विकास,
सबका विश्वास,
सबका प्रयास”

ंकल्प को नमन

उपलब्धियों
ईयां

चार, आधारभूत संरचना और
ो लेकर अनेक महत्वपूर्ण
अंतिम व्यक्ति तक विकास का
सशक्त भारत के निर्माण की
प्रशंसनीय हैं।

ईश्वर से मंगलकामना

इस शुभ अवसर पर ईश्वर से प्रार्थना है कि प्रधानमंत्री जी को उत्तम स्वास्थ्य, दीर्घायु और निरंतर ऊर्जा प्रदान करें, ताकि वे देश की सेवा के अपने संकल्प को आगे भी पूरी निष्ठा के साथ निभाते रहें।

ाएँ!

— शुभेच्छुक —

राजेंद्र पालीवाल
जिला अध्यक्ष
भारतीय जनता पार्टी
जोधपुर शहर

पवन आसोपा
जिला उपाध्यक्ष
भारतीय जनता पार्टी
जोधपुर शहर

डब्बे में खाना नहीं, भरोसा चलता है

मुंबई के 135 वर्ष पुराने डब्बावाला मॉडल पर डॉ. पवन अग्रवाल से जयपुर प्रवास के दौरान *वरिष्ठ पत्रकार बलवंत राज मेहता* की विशेष बातचीत के प्रमुख अंश।

डॉ. पवन अग्रवाल।

क्या कोई ऐसी व्यवस्था संभव है, जहां प्रतिदिन दो लाख लोगों तक भोजन पहुंचे, हजारों टिफ़िन कई हाथों से गुजरें, दर्जनों रेलगाड़ियां बदलें और फिर भी गलती लगभग न के बराबर हो? मुंबई के डब्बावाले पिछले 135 वर्षों से यह चमत्कार रोज़ कर रहे हैं।

जयपुर प्रवास के दौरान अंतरराष्ट्रीय मोटिवेशनल स्पीकर और प्रबंधन विशेषज्ञ डॉ. पवन अग्रवाल से हुई मुलाकात इसी अद्भुत मॉडल के इर्द-गिर्द रही। तीन दशकों से वे मुंबई डब्बावालों की कार्यप्रणाली पर देश-विदेश में व्याख्यान दे रहे हैं। उनका मानना है कि आधुनिक प्रबंधन की बड़ी सीख साधारण लोगों के असाधारण अनुशासन में छिपी है। वे मुस्कराते हुए कहते हैं, डब्बावाले टिफ़िन नहीं पहुंचाते, वे घर का प्यार पहुंचाते हैं। यही एक वाक्य पूरी व्यवस्था का सार बन जाता है।

मुंबई आज ऑनलाइन फूड डिलीवरी का बड़ा बाज़ार है। फिर भी लाखों लोग अपने घर का बना भोजन ही पसंद करते हैं। डॉ. अग्रवाल इसके पीछे केवल स्वाद नहीं, बल्कि मनोविज्ञान देखते हैं। उनके अनुसार मां, पत्नी या बहन के हाथों बना भोजन व्यक्ति को भावनात्मक सुरक्षा देता है। वह केवल पोषण नहीं, परिवार से जुड़ाव का एहसास भी कराता है। यही कारण है कि बदलती जीवनशैली के बावजूद डब्बावालों की प्रासंगिकता बनी हुई है।

आज मुंबई में लगभग 5000 डब्बावाले प्रतिदिन करीब 2 लाख ग्राहकों को सेवा देते हैं। सुबह घरों से टिफ़िन एकत्र होते हैं, उन पर विशेष रंग और संकेत आधारित कोड अंकित किया जाता है। यह कोड बताता है कि डब्बा किस स्टेशन पर जाएगा, किस लोकल ट्रेन में चढ़ेगा और अंतिम वितरण कौन करेगा। पूरी प्रणाली सीमित तकनीक और मानवीय समन्वय पर आधारित है।

डॉ. अग्रवाल बताते हैं कि इस व्यवस्था की रीढ़ मुंबई की उपनगरीय लोकल रेल है। लगभग 60 किलोमीटर के दायरे में यह नेटवर्क फैला हुआ है। प्रत्येक कर्मचारी अपनी भूमिका जानता है। कोई संग्रह करता है, कोई स्टेशन तक पहुंचाता है, कोई ट्रेन में लोड करता है और कोई अंतिम ग्राहक तक डिलीवरी करता है। यह श्रृंखला इतनी व्यवस्थित है कि कुछ मिनट की देरी भी पूरी टीम को सतर्क कर देती है।

यही अनुशासन दुनिया का ध्यान अपनी ओर खींच चुका है। अंतरराष्ट्रीय व्यावसायिक पत्रिका फोर्ब्स ने डब्बावालों की कार्यप्रणाली को सिक्स सिग्मा स्तर की गुणवत्ता का उदाहरण माना। सीमित संसाधनों में मिली यह उपलब्धि प्रबंधन जगत के लिए आश्चर्य का विषय रही है।

डॉ. अग्रवाल याद करते हैं कि डब्बावालों की ख्याति से प्रभावित होकर तत्कालीन प्रिंस चार्ल्स स्वयं मुंबई में उनसे मिलने पहुंचे थे। उन्होंने उनकी कार्यशैली देखी। आज हार्वर्ड, आईआईएम, आईआईटी और अनेक अंतरराष्ट्रीय संस्थानों में यह मॉडल प्रबंधन अध्ययन का हिस्सा बन चुका है।

क्या यह व्यवस्था दूसरे शहरों में सफल हो सकती है? इस प्रश्न पर डॉ. अग्रवाल एक रोचक प्रसंग सुनाते हैं। दिल्ली और बेंगलुरु में डब्बावाला मॉडल शुरू करने के प्रयास हुए, लेकिन अपेक्षित सफलता नहीं मिली। कारण स्पष्ट था, मुंबई जैसी समयबद्ध लोकल रेल व्यवस्था वहां नहीं है। सड़क यातायात पर निर्भर शहरों में जाम समय की निश्चितता को समाप्त कर देता है, जबकि डब्बावाला मॉडल की पूरी ताकत समय की पाबंदी है।

करीब बारह वर्ष पहले इस व्यवस्था को लंदन में भी लागू करने की पहल हुई। मुंबई डब्बावाला संगठन के तत्कालीन सचिव गंगाराम तालेकर छह साथियों के साथ वहां पहुंचे। उन्होंने साइकिलों पर घर-घर जाकर कूपन बांटे और ग्राहकों को जोड़ने का प्रयास किया। प्रारंभिक उत्साह के बावजूद यह प्रयोग स्थायी रूप से सफल नहीं हो सका। डॉ. अग्रवाल का निष्कर्ष है कि किसी मॉडल की सफलता स्थानीय परिवहन, सामाजिक व्यवहार और कार्यसंस्कृति पर भी निर्भर करती है।

भविष्य को लेकर वे निराश नहीं, बल्कि आशावादी हैं। उनका मानना है कि आने वाले वर्षों में डब्बावाले स्वयं डिजिटल मंचों से जुड़ सकते हैं। ऑनलाइन तकनीक का मेल उन्हें नई पहचान दे सकता है। उनके शब्दों में, प्रतिस्पर्धा रेस्तरां से नहीं, भरोसे से है। और भरोसा आज भी डब्बावालों की सबसे बड़ी पूंजी है।

डॉ. पवन अग्रवाल की अपनी यात्रा भी कम प्रेरक नहीं है। राजस्थान के सीकर जिले के माधोपुरा गांव से जुड़े डॉ. अग्रवाल आज महाराष्ट्र में रहते हैं, लेकिन अपनी जड़ों से उनका रिश्ता गहरा है। वे शिक्षक और समाजसेवी भी हैं। कमलाबाई एजुकेशनल एंड चैरिटेबल ट्रस्ट के माध्यम से महाराष्ट्र में अनेक वंचित बच्चों को निःशुल्क शिक्षा दी जा रही है। उनके लिए सफलता का सूत्र आर्थिक उपलब्धि के साथ मानवीय संवेदनाएं और नैतिक नेतृत्व भी है।

पिछले तीन दशकों में डॉ. अग्रवाल ने टेडएक्स, आईआईएम, आईआईटी और अनेक विश्वविद्यालयों में हजारों व्याख्यान दिए हैं। फिर भी वे डब्बावालों की सफलता का श्रेय उन श्रमिकों को देते हैं, जिन्होंने अपने श्रम और ईमानदारी से इस व्यवस्था को विश्वविख्यात बनाया।

जयपुर की इस मुलाकात से लौटते समय मन में एक विचार बार-बार उभरता रहा, तकनीक हमें गति दे सकती है, लेकिन विश्वास नहीं। विश्वास समय पर निभाए गए वादों से बनता है। मुंबई के डब्बावाले पिछले 135 वर्षों से यही वादा निभा रहे हैं। शायद इसी कारण उनके डब्बों में केवल भोजन नहीं, बल्कि भरोसा, अनुशासन और भारतीय परिवार की आत्मीयता भी साथ चलती है।

बारह वर्षों में कितना बदला भारत

मोदी सरकार के बारह वर्षों में भारत की वैश्विक भूमिका बदली है। कूटनीति, रक्षा, तकनीक और रणनीतिक स्वायत्तता के दम पर भारत अब विश्व व्यवस्था में प्रभावशाली शक्ति के रूप में उभरा है।

हरीश मलिक
वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक

अ बीते बारह वर्षों में भारत की वैश्विक स्थिति में आया बदलाव केवल आंकड़ों की कहानी नहीं है, बल्कि यह बदलते आत्मविश्वास, सामर्थ्य और निर्णायक नेतृत्व की कहानी है। देश ने अपनी क्षमताओं को वैश्विक प्रभाव में बदलने की दिशा में जिस गति और शक्ति से कदम बढ़ाए हैं, उसने दुनियाभर का नजरिया बदला है। युद्ध और शांति के सवालों से लेकर आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई तक, यूपीआई जैसी डिजिटल क्रांति से लेकर अंतरिक्ष की नई उड़ानों तक, कोरोना वैक्सीन से लेकर रक्षा आत्मनिर्भरता तक, आज भारत अपनी आवश्यकताओं के साथ-साथ दुनिया की जरूरतों का समाधान देने की क्षमता भी दिखा रहा है। स्टार्टअप, नवाचार और तकनीक ने भारत को नई आर्थिक शक्ति के रूप में स्थापित किया है, जबकि ग्लोबल साउथ की आवाज को मजबूती देने में अहम भूमिका रही है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के विजन पर चलते हुए दुनिया आज भारत को केवल एक बड़े बाजार के रूप में ही नहीं, बल्कि भरोसेमंद साझेदार और भविष्य को दिशा देने वाले देश के रूप में देख रही है।

एक दशक में बदली भारत की जगह

एक दशक पहले तक भारत वैश्विक शक्ति-संतुलन में एक बड़ी संभावना था, लेकिन आज वह उसके समीकरणों को प्रभावित करने वाली मजबूत शक्ति है। 2014 के बाद भारतीय विदेश नीति ने अपनी परंपरागत सीमाओं से बाहर निकलकर वॉशिंगटन से मॉस्को, टोक्यो से तेल अवीव और खाड़ी से अफ्रीका तक संवाद और साझेदारी के नए रास्ते बनाए हैं। जापान के साथ भारत का संबंध बाजार और व्यापार से आगे बढ़कर रणनीतिक हो गया है। मुंबई-अहमदाबाद हाई-स्पीड रेल से लेकर सेमीकंडक्टर, स्वच्छ ऊर्जा, अंतरिक्ष और हिंद-प्रशांत सुरक्षा तक दोनों देशों की साझेदारी बढ़ी है। चीन की चुनौती कायम है, लेकिन सीमा पर प्रतिरोध मजबूत हुआ है। सबसे अहम यह कि भारत ने किसी एक शक्ति-धुरी का हिस्सा बनने के बजाय अपनी रणनीतिक स्वायत्तता को नई धार दी। नई कूटनीति ने 'न्यू इंडिया' को वैश्विक मंच का मुखर चेहरा बना दिया है। बड़ा सवाल यह है कि क्या मोदी-युग में दुनिया के साथ भारत के रिश्ते बदले हैं या दुनिया में भारत की जगह ही बदल गई है?

अमेरिका से अब रणनीतिक साझेदारी

▪ भारत-अमेरिका संबंधों में परिवर्तन शायद मोदी काल की विदेश नीति का सबसे स्पष्ट उदाहरण है। पिछले 12 वर्षों में रक्षा और तकनीक के क्षेत्र में रिश्तों ने रणनीतिक रूप ले लिया है। 2023 में प्रधानमंत्री मोदी की अमेरिकी यात्रा के दौरान GE के F-414 जेट इंजन के भारत में सह-उत्पादन और MQ-9B ड्रोन से जुड़ी घोषणाएं हुईं। 2025 में दोनों देशों ने रक्षा बिक्री और सह-उत्पादन बढ़ाने का निर्णय दोहराया। हालांकि रिश्ते में व्यापार, टैरिफ और रूस से तेल खरीद जैसे मतभेद भी सामने आए हैं। 2025-26 में अमेरिकी टैरिफ को लेकर तनाव इसका प्रमाण है। इसलिए भारत-अमेरिका संबंध मजबूत जरूर हुए हैं, लेकिन वे अधीनता पर नहीं, साझे हित और बातचीत की क्षमता पर आधारित हैं।

रूस से दोस्ती को मिले नए अर्थ

रूस के साथ भारत के संबंधों का चरित्र बदला है। यूक्रेन युद्ध के बाद पश्चिमी देशों के दबाव के बावजूद भारत ने व्लादिमीर पुतिन के साथ संवाद कायम रखा। रक्षा-निर्भरता के साथ शुरू हुआ रिश्ता अब व्यापार, परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष और रणनीतिक संवाद तक फैल चुका है। आर्थिक पक्ष इस दोस्ती का जीवंत उदाहरण है। 2024-25 में द्विपक्षीय व्यापार 68.7 अरब डॉलर का रिकॉर्ड स्तर छू गया, जो 2014-15 में करीब 10 अरब डॉलर था। रूसी तेल की 2026 में भारत के कुल कच्चे तेल आयात में हिस्सेदारी 50.83 प्रतिशत तक पहुंच गई। भारत ने रूस को पश्चिम के विकल्प के रूप में नहीं चुना और अमेरिका को रूस का विकल्प नहीं बनाया। हमने दोनों के साथ रिश्तों को अपने हितों के अनुरूप अलग-अलग संभाला।

पश्चिम एशिया में संतुलन की नई मिसाल बना भारत

पश्चिम एशिया में भारत की भूमिका पिछले 12 वर्षों में काफी बदली है। कभी यह मुख्यतः तेल और प्रवासी भारतीयों का क्षेत्र माना जाता था। आज संयुक्त अरब अमीरात, सऊदी अरब, इजरायल और अन्य पश्चिमी एशियाई देशों के साथ भारत के संबंध रणनीतिक, आर्थिक और सुरक्षा सहयोग तक पहुंच चुके हैं। भारत ने इजरायल के साथ रक्षा और तकनीकी साझेदारी मजबूत की तो दूसरी ओर यूएई और सऊदी अरब के साथ निवेश, ऊर्जा और व्यापार संबंधों को भी नई ऊंचाई दी। भारत की कूटनीति इसलिए अहम है, क्योंकि वह एक ही समय में इजरायल और अरब देशों के साथ संवाद बनाए रखने में सक्षम है। पश्चिम एशिया के लगातार बदलते समीकरणों के बीच यह संतुलन आसान नहीं है।

यूरोप-भारत में साझेदारी अब व्यापार से आगे

भारत अब यूरोप के लिए केवल एक बाजार नहीं, बल्कि रणनीतिक और तकनीकी साझेदार के रूप में उभर रहा है। जी-20 शिखर सम्मेलन में घोषित भारत-मध्य पूर्व-यूरोप आर्थिक गलियारा यानी IMEC हमारी कूटनीति का बड़ा उदाहरण है। इसका उद्देश्य भारत को पश्चिम एशिया के रास्ते यूरोप से जोड़ना है। यह गलियारा पारंपरिक लाल सागर और स्वेज नहर मार्ग की तुलना में व्यापारिक परिवहन समय को 40 प्रतिशत और लॉजिस्टिक्स लागत को करीब 30 प्रतिशत कम कर देगा। इससे वैश्विक सप्लाई चैन में भारत के निर्यात में तेजी आएगी, मध्य पूर्व और यूरोप के बाजारों तक सीधी पहुंच मिलेगी। इसके साथ ही यूरोपीय आयोग की अध्यक्ष उर्सुला वॉन डेर लेयेन ने 2025 में एक ऐतिहासिक और बड़े प्रतिनिधिमंडल के साथ भारत का दौरा किया, जो हिंद-प्रशांत क्षेत्र में अपनी तरह की पहली उच्चस्तरीय यात्रा थी। भारत में यह अब तक का सबसे बड़ा यूरोपीय प्रतिनिधिमंडल था। 2026 के भारत-यूरोपीय संघ एजेंडे में हाई-स्पीड रेल, डिजिटलाइजेशन और डीकार्बोनाइजेशन जैसे क्षेत्रों में सहयोग को आगे बढ़ाने पर जोर दिया गया है।

जी-20 से बनी ग्लोबल साउथ की बुलंद आवाज

भारत की सबसे बड़ी कूटनीतिक उपलब्धियों में 2023 की जी-20 अध्यक्षता को रखा जा सकता है। 125 देशों की भागीदारी के बीच भारत ने जी-20 को केवल विकसित और बड़ी अर्थव्यवस्थाओं का मंच न बनाकर विकासशील देशों की चिंताओं को भी मुखर किया। अफ्रीकी संघ को जी-20 का स्थायी सदस्य बनाए जाने में भी भारत की भूमिका अहम रही। यहीं हमारी विदेश नीति का एक नया चेहरा नजर आया। भारत स्वयं को केवल 'विकासशील देश' के रूप में प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि विकासशील दुनिया और विकसित शक्तियों के बीच संवाद-सेतु के रूप में स्थापित भी किया।

क्वाड और हिंद-प्रशांत में बढ़ता प्रभाव

क्वाड (QUAD) यानि चतुर्भुज सुरक्षा संवाद में भारत की भूमिका मोदी काल में बढ़ी है। अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया और भारत का यह समूह अब केवल रणनीतिक संवाद का मंच नहीं रह गया है। इसका महत्व केवल चीन के संदर्भ में नहीं है, बल्कि समुद्री सुरक्षा, आपदा राहत, महत्वपूर्ण तकनीक, ऊर्जा और सप्लाई चैन तक सहयोग का विस्तार हो चुका है। 2024 के क्वाड शिखर सम्मेलन और मई 2026 में नई दिल्ली में हुई क्वाड विदेश मंत्रियों की बैठक में Indo-Pacific Energy Security Initiative शुरू करने की घोषणा हुई। समुद्री निगरानी, लॉजिस्टिक्स नेटवर्क और क्षेत्रीय बंदरगाह इंफ्रास्ट्रक्चर पर भी सहयोग बढ़ाने की पहल हुई। इसके मायने यह हैं कि हिंद-प्रशांत में भारत अब केवल भौगोलिक रूप से मौजूद देश नहीं, बल्कि क्षेत्रीय व्यवस्था को प्रभावित करने वाला प्रमुख शक्ति-केंद्र बन गया है।

डिफेंस : आयातक भारत से निर्यातक न्यू इंडिया तक

एक दशक के परिवर्तन की कहानी केवल प्रधानमंत्री की विदेश यात्राओं, विश्व नेताओं से मुलाकातों या बड़े-बड़े सम्मेलनों की तस्वीरों में नहीं मिलती। इसके प्रमाण रक्षा निर्यात के आंकड़ों में भी मिलते हैं। रक्षा निर्यात 2013-14 के महज 686 करोड़ से बढ़कर 2025-26 में रिकॉर्ड 38,424 करोड़ रुपए हो गया है। एक समय भारत दुनिया के सबसे बड़े रक्षा आयातकों में शामिल था। आज भारतीय रक्षा उत्पाद 80 से अधिक देशों तक पहुंच रहे हैं। इसी अवधि में घरेलू रक्षा उत्पादन भी 2025-26 में रिकॉर्ड 1.78 लाख करोड़ रुपए तक पहुंच गया। कभी भारत अत्याधुनिक हथियारों के लिए विदेशों पर निर्भर था, वही अब ब्रह्मोस जैसे सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल सिस्टम का निर्यात कर रहा है। 2026 में वियतनाम के साथ ब्रह्मोस का सौदा हुआ, जबकि इंडोनेशिया से करीब 450 मिलियन डॉलर का सौदा प्रक्रियाधीन है। इससे पहले फिलीपींस ने भी भारत के साथ यह सौदा किया था।

मोदी की व्यक्तिगत कूटनीति में भी 'नेशन फर्स्ट'

▪ मोदी की रणनीतिक कूटनीति ने भारत की विदेश नीति को एक नया आयाम दिया है। प्रवासी भारतीयों से बड़े जनसमुदायों से संवाद, भारतीय योग-संस्कृति का वैश्विक मंच पर बखान और विदेश यात्राओं को जन-कूटनीति में बदलना मोदी शैली की विशेषताएं हैं। यह बहुध्रुवीय विश्व में रणनीतिक स्वायत्तता का आधुनिक रूप है। भारत किसी एक खेमे का स्थायी अनुयायी बनने के बजाय विभिन्न मुद्दों पर अलग-अलग साझेदारों के साथ काम कर रहा है।

▪ यह भी शाश्वत सत्य है कि व्यक्तिगत कूटनीति की भी एक सीमा है। किसी भी नेता की लोकप्रियता स्थायी शक्ति नहीं बन सकती। इसके पीछे मजबूत अर्थव्यवस्था, संस्थागत क्षमता, सैन्य शक्ति और तकनीकी सामर्थ्य जरूरी है। इसीलिए भारत आज वैश्विक व्यवस्था का दर्शक नहीं, बल्कि उसके निर्माण में अपनी भूमिका निभाने वाला खिलाड़ी बन गया है। भारत ने दुनिया से यह पूछना बंद कर दिया है कि उसे वैश्विक मंच पर कौन-सी भूमिका दी जाएगी? अब वह खुद अपनी भूमिका पूरे आत्मविश्वास और सामर्थ्य के साथ तय कर रहा है।

असली मुकाबला तकनीक व बाजार में

राकेश गांधी,
वरिष्ठ पत्रकार

चीन भारत के लिए सीमा विवाद से कहीं बड़ी आर्थिक, तकनीकी और सामरिक चुनौती है। भारत को मुकाबले के साथ व्यापार, तकनीक और कूटनीति में सहयोग के रास्ते भी खुले रखने होंगे।

भारत और चीन के संबंधों पर विश्लेषण के दौरान सबसे पहले सीमा विवाद सामने आता है। हिमालय में वास्तविक नियंत्रण रेखा पर दोनों देशों की सेनाओं की तैनाती, गलवान जैसी घटनाएं और अरुणाचल प्रदेश से लेकर लद्दाख तक चीन के दावे स्वाभाविक रूप से चिंता पैदा करते हैं। लेकिन क्या चीन की चुनौती केवल सीमा तक सीमित है? शायद नहीं। वास्तव में भारत के सामने चीन की चुनौती सीमा से कहीं आगे अर्थव्यवस्था, व्यापार, तकनीक और हिंद महासागर तक फैली हुई है।

भारत-चीन संबंधों को सिर्फ सीमा विवाद के चश्मे से देखना पर्याप्त नहीं होगा। चीन भारत का पड़ोसी, बड़ा व्यापारिक साझेदार और सामरिक प्रतिद्वंद्वी भी है। गलवान के बाद ठंडे पड़े रिश्ते में अब धीरे-धीरे संवाद के संकेत दिखाई दे रहे हैं। सीधी उड़ानों, वीजा, कैलाश मानसरोवर यात्रा और सीमा व्यापार की बहाली इसी प्रक्रिया के हिस्से हैं। लेकिन दूसरी ओर आर्थिक और तकनीकी क्षेत्र में चीन की बढ़ती ताकत भारत के सामने एक कहीं बड़ी चुनौती बन चुकी है।

सीमा पर शांति, लेकिन विवाद बरकरार

- 2020 के गलवान संघर्ष के बाद भारत-चीन के संबंध कठिन दौर में रहे। दोनों देशों ने सीमा पर बड़ी संख्या में सैनिक और सैन्य संसाधन तैनात किए। 2024 में देपसांग और डेमचोक में सैनिकों की वापसी और गश्त को लेकर समझ बनी, लेकिन सीमा विवाद कायम है।
- अगस्त 2026 में भारत-चीन सीमा मामलों पर 36वीं बैठक हुई। इसमें वास्तविक नियंत्रण रेखा पर शांति और द्विपक्षीय संबंधों के लिए अनुकूल परिस्थितियों पर चर्चा हुई। सीमा का प्रश्न अभी भी संबंधों की बुनियाद में है। अब सीमा का अर्थ केवल जमीन की सीमा नहीं है। तिब्बत में ब्रह्मपुत्र यानी यारलुंग त्सांगपो पर चीन की बड़ी जलविद्युत परियोजनाएं भारत के लिए जल सुरक्षा की चिंता भी पैदा कर रही हैं। हाल की बातचीत में भारत ने चीन से उसकी ऊपरी धारा की जल परियोजनाओं की तकनीकी जानकारी साझा करने और अंतरसीमाई नदियों से जुड़े तंत्र की अगली बैठक जल्द बुलाने की जरूरत दोहराई है।

असली दबाव बाजार में

- चीन की बड़ी ताकत उसकी अर्थव्यवस्था और विनिर्माण क्षमता है। भारत और चीन के बीच व्यापार इसका स्पष्ट उदाहरण है। आधिकारिक भारतीय दूतावास के आंकड़ों के अनुसार 2025-26 में चीन से आयात 131.63 अरब डॉलर, निर्यात 19.47 अरब डॉलर और व्यापार घाटा 112.16 अरब डॉलर रहा।
- बात सिर्फ व्यापार घाटे की नहीं है। यह भारत की उस निर्भरता को दिखाता है, जिसमें चीन से आने वाला सामान भारतीय उद्योग के लिए आवश्यक हो चुका है। मोबाइल फोन, इलेक्ट्रॉनिक उपकरण, मशीनरी, सौर उपकरण, बैटरी, रसायन, औद्योगिक कलपुर्जे और अनेक प्रकार के कच्चे माल में चीन की मौजूदगी गहरी है। भारत यदि चीन से अचानक आयात बंद कर दे तो समस्या केवल बाजार में चीनी वस्तुओं की उपलब्धता की नहीं होगी, बल्कि अनेक भारतीय उद्योगों की उत्पादन श्रृंखला प्रभावित हो सकती है।
- व्यापार घाटे का दूसरा पहलू यह है कि भारत चाहता है कि चीन अपने बाजार में भारतीय उत्पादों और सेवाओं के लिए अधिक अवसर दे। दवाओं, कृषि उत्पादों और सूचना प्रौद्योगिकी सेवाओं सहित कई क्षेत्रों में भारतीय कंपनियां बाजार पहुंच की शिकायत करती रही हैं। हाल की बातचीत में भारत ने बाजार पहुंच, व्यापार असंतुलन और निष्पक्ष व्यापार का मुद्दा उठाया है। इसलिए चुनौती केवल चीन से आयात कम करना नहीं, बल्कि चीन को अधिक संतुलित तरीके से निर्यात करना भी है।

विनिर्माण और तकनीक की असली लड़ाई

- आने वाले समय में चीन से मुकाबला तकनीक के क्षेत्र में भी होगा। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, दूरसंचार, इलेक्ट्रॉनिक्स, बैटरी, विद्युत वाहन, सौर ऊर्जा, ड्रोन और सेमीकंडक्टर से जुड़ी आपूर्ति श्रृंखलाओं में चीन ने बड़ी क्षमता विकसित की है। भारत ने सेमीकंडक्टर निर्माण और इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण पहल की हैं। मोबाइल फोन उत्पादन और इलेक्ट्रॉनिक्स निर्यात में भारत की क्षमता तेजी से बढ़ी है। लेकिन चुनौती यह है कि अंतिम उत्पाद भारत में बनने के बावजूद उसके अनेक महत्वपूर्ण घटक अभी चीन और पूर्वी एशिया की आपूर्ति श्रृंखला से आते हैं।
- यहीं अहम सवाल है। क्या राष्ट्रीय सुरक्षा के कारण चीन से आर्थिक दूरी रखते हुए भी भारत अपनी विनिर्माण जरूरतें पूरी कर सकता है? 2026 में भारत ने भूमि सीमा साझा करने वाले देशों से निवेश के नियमों में कुछ बदलाव किए हैं। सरकार ने इलेक्ट्रॉनिक घटकों और पूंजीगत वस्तुओं जैसे क्षेत्रों में निवेश को बढ़ावा देने के लिए नियमों में ढील दी है, लेकिन सुरक्षा संबंधी जांच का ढांचा बना हुआ है।
- भारत चीन को पूरी तरह आर्थिक रूप से अलग-थलग करने की स्थिति में नहीं है और ऐसा करना जरूरी भी नहीं है। जरूरत नियंत्रित सहयोग की है, जिसमें राष्ट्रीय सुरक्षा से समझौता किए बिना उसकी तकनीकी और विनिर्माण क्षमता का उपयोग किया जा सके। इसलिए चीन से मुकाबले का अर्थ चीनी वस्तुओं का बहिष्कार करना नहीं है। असली मुकाबला अपनी तकनीकी क्षमता, अनुसंधान, डिजाइन, उत्पादन और आपूर्ति श्रृंखला को मजबूत करने का है।

हिंद महासागर में चीन की मौजूदगी

▪ चीन की चुनौती जमीन पर ही नहीं है। हिंद महासागर में उसकी बढ़ती गतिविधियां भी भारत के लिए महत्वपूर्ण हैं। पाकिस्तान में ग्वादर बंदरगाह से लेकर श्रीलंका और हिंद महासागर के दूसरे हिस्सों तक चीन की आर्थिक और समुद्री मौजूदगी बढ़ी है। पाकिस्तान के साथ चीन का संबंध भारत के लिए चिंता का विषय है। चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से होकर गुजरता है। चीन ने सामरिक प्रभाव के लिए पाकिस्तान में सड़क, ऊर्जा, बंदरगाह और अन्य आधारभूत परियोजनाओं में बड़ा निवेश किया है।

▪ भारत को एक साथ दो मोर्चों पर नजर रखनी है। हिमालय में चीन और पश्चिमी सीमा पर पाकिस्तान। यदि दोनों देशों के बीच सामरिक सहयोग बढ़ता है तो भारत के लिए यह स्थिति और जटिल हो सकती है। इसलिए भारत को समुद्री मार्गों और हिंद महासागर में अपनी स्थिति भी मजबूत करनी होगी।

अमेरिका-चीन संघर्ष और भारत

▪ अमेरिका-चीन की व्यापार, तकनीक और सामरिक प्रतिस्पर्धा भारत के लिए अवसर और चुनौती दोनों है। चीन के खिलाफ अमेरिकी शुल्क, तकनीकी प्रतिबंध और आपूर्ति श्रृंखलाओं में बदलाव से अनेक वैश्विक कंपनियां चीन के अलावा दूसरे देशों में उत्पादन केंद्र तलाश रही हैं।

क्या भारत चीन का आर्थिक विकल्प बन सकता है? कुछ क्षेत्रों में निश्चित रूप से बन सकता है, लेकिन चीन का पूर्ण विकल्प बनना आसान नहीं। चीन ने दशकों में विशाल विनिर्माण क्षमता, बंदरगाह और आपूर्ति श्रृंखला तैयार की है। भारत को वहां तक पहुंचने में समय लगेगा।

▪ भारत के पास विशाल बाजार, युवा कार्यबल और बेहतर डिजिटल अर्थव्यवस्था जैसी ताकतें हैं। लेकिन केवल चीन से कंपनियां भारत लाने से काम नहीं चलेगा। भारत को सस्ती और विश्वसनीय बिजली, बेहतर बंदरगाह, तेज परिवहन, कुशल श्रम और प्रतिस्पर्धी उत्पादन लागत सुनिश्चित करनी होगी। हमारा लक्ष्य अपनी औद्योगिक क्षमता को और विकसित करना होना चाहिए।

मुकाबला भी, सहयोग भी

▪ क्या भारत को चीन से पूरी तरह दूरी बना लेनी चाहिए? व्यावहारिक उत्तर शायद नहीं है। दुनिया की दो बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के बीच पूर्ण आर्थिक अलगाव आसान भी नहीं है और जरूरी भी नहीं। भारत को चीन के साथ प्रतिस्पर्धी माहौल में सहयोग के रास्ते भी खुले रखने होंगे। इसीलिए हाल के महीनों में सीधी यात्री उड़ानों, पर्यटक वीजा, कैलाश मानसरोवर यात्रा और सीमा व्यापार को फिर सामान्य बनाने के कदम महत्वपूर्ण हैं। ये दोनों देशों के बीच जन-संपर्क और विश्वास बहाली के महत्वपूर्ण सकारात्मक संकेत हैं। 2026 में सीमा व्यापार भी फिर शुरू हुआ है और दोनों देशों के बीच संपर्क बढ़ाने की प्रक्रिया आगे बढ़ी है।

▪ पत्रकारों की आवाजाही भी इसी प्रक्रिया का हिस्सा है। दोनों देशों के पत्रकारों की गतिविधियां लंबे समय से सीमित रही हैं। संबंधों को सामान्य बनाने के लिए नेताओं और अधिकारियों के बीच बातचीत के साथ ही पत्रकारों, शिक्षाविदों, व्यापारियों और आम नागरिकों के बीच भी संवाद जरूरी है। इसी तरह अंतरसीमाई नदियों से जुड़े आंकड़ों और सूचनाओं का आदान-प्रदान, सीमा व्यापार और बाजार पहुंच जैसे विषय बताते हैं कि भारत-चीन संबंध अब एक साथ कई मोर्चों पर बातचीत मांगते हैं।

शी जिनपिंग की यात्रा क्यों महत्वपूर्ण?

इसी पृष्ठभूमि में सितंबर में होने वाला ब्रिक्स शिखर सम्मेलन महत्वपूर्ण है। भारत इस वर्ष ब्रिक्स की मेजबानी कर रहा है और चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के नई दिल्ली आने की संभावना है। यदि यह यात्रा होती है तो गलवान संघर्ष के बाद यह उनकी पहली भारत यात्रा होगी। यह यात्रा संबंधों के सामान्यीकरण की परीक्षा भी होगी। सीमा पर शांति, व्यापार असंतुलन, बाजार पहुंच, निवेश, तकनीकी सहयोग, जल सुरक्षा और जन-संपर्क जैसे मुद्दे बातचीत की मेज पर होंगे। लेकिन भारत को यह स्पष्ट रखना होगा कि संबंधों में सुधार सीमा पर शांति और विश्वास के बिना संभव नहीं है।

तो सीमा से बड़ी चुनौती क्या?

- चीन के संदर्भ में भारत को चुनौती की पूरी तस्वीर देखने की जरूरत है। सीमा पर चीन का सामना करने के लिए मजबूत सेना चाहिए, लेकिन बाजार में मुकाबले के लिए मजबूत उद्योग चाहिए। तकनीक में मुकाबले के लिए अनुसंधान और नवाचार चाहिए। हिंद महासागर में प्रभाव के लिए मजबूत नौसेना चाहिए और वैश्विक स्तर पर चीन का विकल्प बनने के लिए प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था चाहिए।
- इसलिए मूल सवाल का जवाब सीधा है। सीमा पर चीन की चुनौती तत्काल और सामरिक है, लेकिन बाजार और तकनीक की चुनौती ज्यादा व्यापक और दीर्घकालिक है। सीमा की रक्षा सैनिक करेंगे, लेकिन चीन की आर्थिक चुनौती का जवाब कारखानों में तैयार होगा। तकनीकी चुनौती का जवाब प्रयोगशालाओं और विश्वविद्यालयों में तैयार होगा। व्यापार घाटे का जवाब भारतीय उत्पादों की वैश्विक प्रतिस्पर्धा से मिलेगा और चीन की बढ़ती समुद्री मौजूदगी का जवाब मजबूत नौसैनिक और आर्थिक क्षमता से देना होगा।
- चीन से आयात कम करने का सबसे अच्छा तरीका प्रतिबंध नहीं, बल्कि भारत में प्रतिस्पर्धी उत्पादन खड़ा करना है। अपने अनुसंधान और तकनीकी संस्थानों को विश्वस्तरीय बनाना है। इसलिए चीन के सामने भारत की बड़ी जरूरत टकराव नहीं, अपनी ताकत का विस्तार है। चीन से मुकाबला जरूरी है, लेकिन हर क्षेत्र में टकराव नहीं। जहां राष्ट्रीय हित की रक्षा के साथ सहयोग संभव है, वहां संवाद के रास्ते खुले रखने होंगे। आखिरकार मजबूत भारत ही चीन से बेहतर तरीके से मुकाबला भी कर सकता है और बराबरी की बातचीत भी।

विदेशी नौकरी का खतरनाक जाल

विदेश में नौकरी का झांसा देकर युवाओं को साइबर अपराध के अड्डों में पहुंचाया जा रहा है। मानव तस्करी, साइबर ठगी और संगठित अपराध का यह गठजोड़ गंभीर चुनौती बन चुका है।

ज्ञान चंद पाटनी
वरिष्ठ पत्रकार

भारत मानव तस्करी के खतरनाक और नए रूप से जूझ रहा है। युवाओं को आकर्षक नौकरियों के सपने दिखाकर विदेश ले जाया जाता है और फिर उन्हें जबरन साइबर अपराध करने के लिए बाध्य किया जाता है। दक्षिण-पूर्व एशिया में साइबर स्कैम कंपाउंड्स में फंसे भारतीय युवाओं की 'साइबर गुलामी' की खबरें लगातार सामने आ रही हैं। यह समस्या एक गंभीर राष्ट्रीय सुरक्षा और मानवाधिकार संकट बन चुकी है। बदमाश 20-35 साल के युवाओं को आकर्षक आईटी और कस्टमर सर्विस नौकरियों का लालच देते हैं। फेसबुक, इंस्टाग्राम, वाट्सऐप और टेलीग्राम जैसे प्लेटफॉर्म पर चलने वाले फर्जी विज्ञापनों और एजेंटों के नेटवर्क इस धोखाधड़ी की रीढ़ हैं। यह महज रोजगार धोखाधड़ी का मामला नहीं, बल्कि संगठित अपराध, साइबर ठगी और अंतरराष्ट्रीय मानव तस्करी का खतरनाक गठजोड़ है।

साइबर गिरोह बहुत चालाकी से कार्य करते हैं। विदेश पहुंचते ही पीड़ितों के पासपोर्ट छीन लिए जाते हैं और आने-जाने पर सख्ती से रोक लगा दी जाती है। उनकी 24 घंटे निगरानी की जाती है। कुछ दिन की ट्रेनिंग के बाद पीड़ितों को 12-16 घंटे की पारियों में काम करने के लिए मजबूर किया जाता है। शारीरिक प्रताड़ना और वित्तीय दबाव बनाकर उन्हें साइबर अपराध करने के लिए मजबूर किया जाता है। मुख्य रूप से म्यांमार, कंबोडिया और लाओस में ऐसे मामले सामने आए हैं। फिलीपींस और थाईलैंड-म्यांमार सीमा क्षेत्र भी इसमें शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र की माइग्रेशन एजेंसी आईओएम का मानना है कि म्यांमार, कंबोडिया और लाओस में करीब 3 लाख लोगों को जबरन इन स्कैम कंपाउंड्स में काम करने के लिए मजबूर किया जा रहा है।

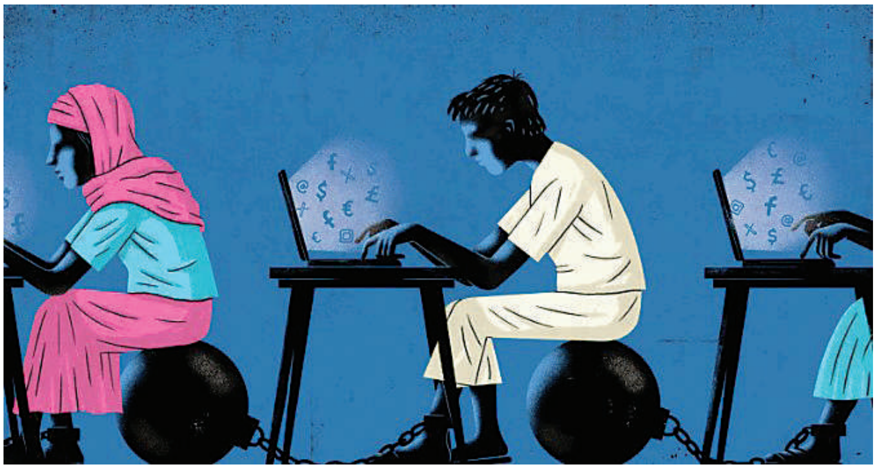

चार वर्ष में 6998 लोगों को मिली मुक्ति

समस्या की गंभीरता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि कंबोडिया, लाओ पीडीआर और म्यांमार में पिछले चार वर्षों यानी 2022 से दिसंबर 2025 तक 6998 भारतीय नागरिकों को बचाया गया। कंबोडिया से 2533, लाओपीडीआर से 2297 और म्यांमार से 2168 भारतीयों की सुरक्षित वापसी हुई। विदेश राज्य मंत्री कीर्तिवर्धन सिंह ने एक सवाल के जवाब में इसी वर्ष फरवरी में लोकसभा में बताया था कि सरकार को इन देशों में फंसे भारतीय नागरिकों की सटीक संख्या का पता नहीं है। इसकी वजह यह है कि उनको अवैध चैनलों के माध्यम से इन स्कैम सेंटरों तक पहुंचाया जाता है।

करीब 80 देशों के युवा चंगुल में

संयुक्त राष्ट्र मादक पदार्थ एवं अपराध कार्यालय (यूएनओडीसी) की कुछ समय पूर्व जारी रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2025 में एशिया-प्रशांत क्षेत्र के लोगों से साइबर ठग गिरोहों ने अनुमानतः 114 अरब डॉलर तक की ठगी की। यह राशि इस क्षेत्र के कई देशों के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) से भी अधिक है। इससे साफ है कि समस्या कितनी गंभीर है। दक्षिण-पूर्व एशिया में सक्रिय साइबर ठगी केंद्र दुनिया भर के लोगों को निशाना बना रहे हैं और हर साल अरबों डॉलर बटोर रहे हैं। इनमें से कई केंद्रों में विदेशों से तस्करी कर लाए गए लोगों से काम कराया जाता है और उन्हें गुलामों की तरह रखा जाता है। यूएनओडीसी के अनुसार पूरे क्षेत्र में मौजूद साइबर ठगी परिसरों में भारत समेत करीब 80 देशों के लोगों की पहचान की गई है। साइबर गिरोह नए स्थानों पर अपने नेटवर्क के विस्तार के साथ अब एशिया के बाहर से भी भर्ती करने की कोशिश कर रहे हैं। जर्मन, पोलिश, डच, स्पेनिश, इतालवी, फ्रेंच, स्वीडिश, नॉर्वेजियन और अंग्रेजी भाषाओं का ज्ञान रखने वाले लोगों पर इनकी निगाह रहती है। वे उनको बरगलाने के नए-नए रास्ते तैयार करते रहते हैं।

राजस्थान के 500 से ज्यादा युवाओं की पहचान

हाल ही राजस्थान पुलिस की स्टेट साइबर क्राइम थाना पुलिस की कार्रवाई भी अखबारों की सुर्खियां बनी हैं। साइबर पुलिस ने अंतरराष्ट्रीय साइबर ठगी और मानव तस्करी से जुड़े एक बड़े नेटवर्क का पर्दाफाश करते हुए दस आरोपियों को गिरफ्तार किया है। यह गिरोह युवाओं को विदेश में अच्छी नौकरी का लालच देकर कंबोडिया, वियतनाम, म्यांमार और लाओस भेजता था। वहां उनके पासपोर्ट छीन लिए जाते और उन्हें डिजिटल अरेस्ट, फर्जी इन्वेस्टमेंट और क्रिप्टो फ्रॉड जैसे साइबर अपराध करने के लिए मजबूर किया जाता था। साइबर क्राइम पुलिस के अनुसार आई4सी के डाटा विश्लेषण में राजस्थान के 500 से अधिक लोगों की पहचान हुई है, जिन्हें इन देशों में भेजा गया था। वापस लौटे कुछ पीड़ितों ने पुलिस को बताया कि साइबर स्कैम सेंटर में पहले उन्हें प्रशिक्षण दिया जाता था। उनको फर्जी प्रोफाइल के जरिए भारतीय नागरिकों से सोशल मीडिया पर दोस्ती कर विश्वास जीतने के लिए कहा जाता था। फिर लोगों को डिजिटल अरेस्ट, क्रिप्टोकरेंसी और निवेश के नाम पर ठगी के रास्ते पर आगे बढ़ाया जाता था। ठगी की रकम क्रिप्टोकरेंसी में बदलकर चीन और कंबोडिया के हैंडलर्स तक पहुंचाई जाती थी। जांच में सामने आया कि विदेश पहुंचते ही युवाओं के पासपोर्ट और पहचान-पत्र जब्त कर लिए जाते थे। उनको एक तरह से बंधक बनाकर इशारों पर नचाया जाता था।

सामने आया दूसरे अपराधों से जुड़ाव

युवाओं को साइबर गुलाम बनाकर उनसे साइबर धोखाधड़ी का यह नेटवर्क दूसरे अपराधों से भी जुड़ा हुआ है। यूएनओडीसी की रिपोर्ट में बताया गया है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय साइबर गिरोह सरकारी जांच एजेंसियों से आगे रहने के लिए अपने तौर-तरीकों में तेजी से बदलाव कर रहे हैं। दक्षिण-पूर्व एशिया में मुख्य रूप से चीनी मूल के संगठित अपराध सिंडिकेट साइबर धोखाधड़ी के बड़े केंद्र के रूप में सक्रिय हैं। वे आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का भी इस्तेमाल कर रहे हैं। ऐसे गिरोहों का जो नेटवर्क पहले किसी खास क्षेत्र या किसी विशेष अवैध कारोबार तक सीमित रहता था, लेकिन अब वह तेजी से कई तरह के गैरकानूनी बाजारों में फैल रहा है। उनका संचालन मॉडल कॉरपोरेट जैसा दिखाई देता है। रिपोर्ट के अनुसार साइबर ठगी के तेजी से विस्तार के साथ इससे जुड़े कई सहायक अपराधों का पूरा तंत्र खड़ा कर दिया गया है। इसमें मनी लॉन्ड्रिंग, हवाला और डेटा की खरीद-फरोख्त जैसी गतिविधियां शामिल हैं।

साइबर गिरोह बदल रहे हैं ठिकाने

यूएनओडीसी ने कहा कि सरकारी जांच एजेंसियों की हालिया कार्रवाई ने इन गिरोहों पर दबाव तो बनाया है, लेकिन इससे उनकी गतिविधिया ठप नहीं हुई हैं। साइबर गिरोह अपना ठिकाना बदल रहे हैं। वे म्यांमार और लाओस जैसे देशों से निकलकर पूर्वी तिमोर, प्रशांत द्वीप देशों और अफ्रीका के कुछ हिस्सों में अपना नेटवर्क स्थानांतरित कर रहे हैं। साइबर गिरोह ऐसे स्थानों की तलाश में रहते हैं, जहां का शासन कमजोर हो।

आधुनिक तकनीक में आगे

अपराधी समूह पहले से ही जनरेटिव एआई का इस्तेमाल कर रहे हैं। आशंका यह है कि वे एजेंटिक एआई सिस्टम को भी अपनाने की तैयारी कर रहे हैं। एजेंटिक एआई सिस्टम एक ऐसी स्वायत्त कृत्रिम बुद्धिमत्ता है जो खुद ही योजना बनाकर काम कर सकती है। इसकी मदद से बदमाश शिकार की आसानी से पहचान कर सकते हैं। साथ ही सटीक सोशल मीडिया अभियान चलाने तथा क्रिप्टोकरेंसी की चोरी या मनी लॉन्ड्रिंग जैसे कार्य भी आसान हो जाएंगे।

ये पीड़ित हैं, साइबर अपराधी नहीं

यह समस्या भारत की बड़ी युवा आबादी, बेरोजगारी और विदेश में बेहतर रोजगार की चाह से सीधी जुड़ी है। तस्कर इन कमजोरियों का फायदा उठाते हैं। कई पीड़ित आईटी बैकग्राउंड के होते हैं, जो साइबर फ्रॉड के लिए उपयुक्त माने जाते हैं। यदि किसी युवा को धमकी या जबरदस्ती साइबर अपराध कराया गया, तो वह स्वयं मानव तस्करी का पीड़ित है, न कि अपराधी। इसलिए पीड़ितों की सुरक्षा और पुनर्वास पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

सरकार कर रही है प्रयास

भारत सरकार समस्या की गंभीरता से परिचित है। यही वजह है कि सरकार ने समय-समय पर संबंधित देशों की सरकारों के साथ इस मुद्दे को उठाया है। पीड़ितों को बचाने के लिए अभियान भी चलाया है।

विदेश मंत्रालय समय-समय पर फर्जी नौकरी के बारे में सलाह और सोशल मीडिया पोस्ट जारी करता रहता है। इसी तरह की सूचनाएं विदेश स्थित संबंधित भारतीय मिशन-केंद्र भी अपनी आधिकारिक वेबसाइटों, सोशल मीडिया हैंडल और प्रिंट मीडिया के माध्यम से जारी करते रहते हैं। लोगों को सतर्क करने के लिए ई-माइग्रेट पोर्टल पर अपंजीकृत भर्ती एजेंटों की एक सूची अधिसूचित की गई है। पीड़ित व्यक्तियों द्वारा दर्ज की गई शिकायतों और विदेशों में स्थित हमारे मिशनों-केंद्रों से प्राप्त जानकारी के आधार पर इस जानकारी को नियमित रूप से अपडेट भी किया जाता है। अवैध एजेंटों और संदिग्ध फर्मों के खिलाफ शिकायतें संबंधित राज्य सरकारों और अन्य एजेंसियों जैसे कि आई4सी तथा गृह मंत्रालय के साथ उचित कार्रवाई के लिए नियमित रूप से साझा की जाती हैं।

युवाओं की जिम्मेदारी कम नहीं

साइबर विशेषज्ञों का कहना है कि सरकार की सक्रियता के बावजूद युवाओं को खुद भी जिम्मेदारी समझनी होगी। विदेश में नौकरी का प्रस्ताव मिलने पर उनको कई सावधानियां बरतनी चाहिए। सबसे पहले भर्ती एजेंसी की वैधता की जांच करें कि क्या एजेंसी पंजीकृत है और विदेश मंत्रालय की वेबसाइट पर उसका विवरण उपलब्ध है। कंपनी और नियोक्ता का नाम, पता, वेबसाइट और संपर्क विवरण सत्यापित करें। वीजा और अनुबंध की वैधता, नौकरी का अनुबंध, वेतन और कार्य शर्तें स्पष्ट हों। पासपोर्ट, वीजा, टिकट और अन्य दस्तावेजों की जांच करें। बिना जांच के किसी एजेंट को पैसा न दें।

भाजपा-कांग्रेस को अपनों का डर

धर्मेंद्र प्रजापति,,
वरिष्ठ पत्रकार

अजमेर नगर निगम चुनाव में भाजपा और कांग्रेस के सामने विपक्ष से ज्यादा अपने असंतुष्टों को संभालने की चुनौती है। टिकट बंटवारे के बाद गुटबाजी और भीतरघात निर्णायक हो सकते हैं।

अजमेर नगर निगम चुनाव की बिसात बिछ चुकी है। 80 वार्डों का आरक्षण तय होने के बाद दावेदार सक्रिय हैं और महापौर की कुर्सी महिला के लिए आरक्षित होने से मुकाबला दिलचस्प हो गया है। लेकिन इस चुनाव में भाजपा और कांग्रेस के सामने बड़ी चुनौती एक-दूसरे को हराने की बजाय अपने ही घर को संभालने की है।

भाजपा में पूर्व महापौर धर्मेंद्र गहलोत के इस्तीफे ने लंबे समय से अंदरखाने चल रहे मतभेद को सार्वजनिक संघर्ष में बदल दिया है। वहीं कांग्रेस में अशोक गहलोत और सचिन पायलट से जुड़े स्थानीय राजनीतिक खेमों के बीच दूरी कोई नई बात नहीं है। चुनाव से पहले अलग-अलग शक्ति प्रदर्शन यह संकेत दे रहे हैं कि टिकट वितरण के बाद असली परीक्षा शुरू होगी।

भाजपा : धर्मेंद्र गहलोत के इस्तीफे से बदले समीकरण

अजमेर भाजपा के भीतर लंबे समय से चली आ रही राजनीतिक खींचतान अब खुले संघर्ष में बदल गई है। पूर्व महापौर धर्मेंद्र गहलोत ने भाजपा की प्राथमिक सदस्यता के साथ निकाय चुनाव के लिए मिले नागौर जिला प्रभारी पद से भी इस्तीफा दे दिया है। उन्होंने विधानसभा अध्यक्ष एवं अजमेर उत्तर विधायक वासुदेव देवनानी के साथ अपने राजनीतिक और वैचारिक मतभेदों को सार्वजनिक करते हुए तीखे आरोप लगाए हैं। जबकि देवनानी ने कहा है कि उनका किसी से कोई मतभेद नहीं है। नगर निगम की राजनीति में धर्मेंद्र गहलोत का लंबा अनुभव है। हालांकि इस्तीफे का वास्तविक चुनावी असर कितना होगा, यह प्रत्याशी चयन और आने वाले दिनों की राजनीतिक गतिविधियों से स्पष्ट होगा। भाजपा को यह भी सुनिश्चित करना होगा कि अंदरूनी नाराजगी मतदान केंद्र तक न पहुंचे।

भाजपा : टिकट वितरण सबसे बड़ी परीक्षा

नगर निगम के 80 वार्डों की आरक्षण लॉटरी ने कई पुराने दावेदारों की जमीन बदल दी है। कुछ मौजूदा और पूर्व पार्षदों के वार्ड आरक्षित होने से उन्हें नया वार्ड तलाशना पड़ सकता है, जबकि कई नए दावेदार टिकट की कतार में आ गए हैं। नगर निगम चुनाव विधानसभा या लोकसभा चुनाव से अलग है। यहां एक वार्ड में कुछ सौ वोटों का उलटफेर भी परिणाम बदल सकता है। यदि टिकट नहीं मिलने वाला नेता खुलकर बगावत न कर सिर्फ निष्क्रिय हो जाए, तो भी पार्टी प्रत्याशी को नुकसान संभव है। कार्यकर्ताओं का घर बैठ जाना, समर्थकों को सक्रिय नहीं करना अथवा दूसरे प्रत्याशी के प्रति नरम रुख अपनाना भी स्थानीय चुनाव में निर्णायक साबित हो सकता है।

धर्मेंद्र गहलोत प्रकरण के बाद भाजपा नेतृत्व के सामने इसलिए दोहरी चुनौती है, टिकट का सही चयन और नाराज कार्यकर्ताओं का प्रबंधन। सत्ता में रहने वाली पार्टी में दावेदार ज्यादा हैं तो असंतुष्ट भी ज्यादा हैं। गहलोत स्वयं कह चुके हैं कि देवनानी के साथ उनका राजनीतिक संघर्ष आगे भी जारी रहेगा। इसलिए अब नजर इस बात पर रहेगी कि गहलोत आगे क्या राजनीतिक रुख अपनाते हैं और उनके साथ जुड़े स्थानीय कार्यकर्ता नगर निगम चुनाव में किस भूमिका में दिखाई देते हैं।

कांग्रेस : पुरानी गुटबाजी बन सकती है सिरदर्द

अजमेर कांग्रेस की समस्या कुछ अलग है। यहां लंबे समय से अलग-अलग राजनीतिक खेमे सक्रिय रहे हैं। अशोक गहलोत और सचिन पायलट के बीच रही राजनीतिक प्रतिस्पर्धा की छाया अजमेर की स्थानीय राजनीति पर भी दिखाई देती रही है। पिछले पांच साल से सचिन पायलट समर्थक विजय जैन ही शहर जिला कांग्रेस अध्यक्ष की जिम्मेदारी वहन कर रहे थे, लेकिन करीब तीन माह पहले ही प्रदेश आलाकमान ने गहलोत समर्थक पूर्व विधायक राजकुमार जयपाल को अध्यक्ष की कमान सौंप दी। इसके पीछे गहलोत समर्थक पूर्व आरटीडीसी चेयरमैन धर्मेन्द्र राठौड़ का हाथ माना जा रहा है। निगम चुनाव के ऐन वक्त यह बदलाव गुटबाजी को और बढ़ा सकता है। दोनों खेमे अलग-अलग कार्यक्रमों के माध्यम से शक्ति प्रदर्शन कर चुके हैं। पायलट समर्थकों ने पूर्व अध्यक्ष विजय जैन और वरिष्ठ कांग्रेस नेता हेमंत भाटी के नेतृत्व में श्रीनगर रोड खंडेलवाल धर्मशाला में कार्यकर्ता संवाद और गहलोत समर्थकों ने वर्तमान अध्यक्ष डा. राजकुमार जयपाल, पूर्व आरटीडीसी चेयरमैन धर्मेन्द्र राठौड़, डेयरी अध्यक्ष रामचंद्र चौधरी, प्रतिपक्ष नेता द्रोपदी कोली के नेतृत्व में नसीराबाद रोड स्थित निजी समारोह स्थल में कार्यकर्ता सम्मेलन कर अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया। ऐसे में कांग्रेस के लिए चुनावी वैतरणी पार करना चुनौती भरा है।

अब कांग्रेस के सामने असली सवाल यह है कि टिकट वितरण के समय किस खेमे के कितने लोगों को टिकट मिलता है। यदि टिकटों में किसी एक समूह के वर्चस्व की धारणा बनती है तो दूसरे खेमे की नाराजगी चुनाव में भारी पड़ सकती है। यह स्थिति इसलिए भी संवेदनशील है क्योंकि पार्टी निकाय चुनाव के टिकटों के लिए ऑनलाइन आवेदन जैसी प्रक्रिया अपना रही है और कांग्रेस का प्रदेश नेतृत्व चयन प्रक्रिया की निगरानी करेगा। इसका उद्देश्य पारदर्शिता बढ़ाना है।

बागी से ज्यादा 'निष्क्रियता' का खतरा

नगर निगम चुनाव में पार्टी के अधिकृत उम्मीदवार के खिलाफ निर्दलीय मैदान में उतरना भीतरघात का सबसे दिखाई देने वाला रूप है। लेकिन इससे कहीं अधिक खतरनाक वह कार्यकर्ता है जो पार्टी में रहते हुए चुनाव से दूरी बना ले। अजमेर दक्षिण क्षेत्र में कांग्रेस के कई वार्ड हैं, जहां प्रत्याशी की जीत संगठन के वोट से ज्यादा स्थानीय नेटवर्क, जातीय समीकरण और व्यक्तिगत संपर्क पर निर्भर करेगी। कोली बाहुल्य वार्डों में कांग्रेस नेता हेमंत भाटी का वर्चस्व माना जाता है। इस क्षेत्र से कांग्रेस के टिकट पर विधानसभा चुनाव लड़ीं द्रोपदी कोली की हार के पीछे भी भाटी का वर्चस्व प्रमुख कारण माना जाता है। भाटी इस क्षेत्र से कांग्रेस के टिकट पर दो बार चुनाव हारने के बाद तीसरी बार टिकट मांग रहे थे, लेकिन अशोक गहलोत गुट की द्रोपदी कोली को टिकट दिया गया और उन्हें हार का सामना करना पड़ा। अब निगम चुनाव में कोली समाज बाहुल्य वार्डों में टिकट वितरण को लेकर गहलोत गुट के डा. राजकुमार जयपाल, विधानसभा प्रत्याशी द्रोपदी कोली और हेमंत भाटी के बीच रस्साकसी जारी है। ऐसे में टिकट से वंचित किसी मजबूत दावेदार के समर्थक यदि निष्क्रिय हो गए तो कुछ सौ वोटों का अंतर भी परिणाम पलट सकता है। इसलिए कांग्रेस को उम्मीदवार तय करने के साथ ही बाकी दावेदारों को भी उम्मीदवार के साथ खड़ा करना होगा। धर्मेन्द्र राठौड़ हालांकि हेमंत भाटी, द्रोपदी कोली और डा. राजकुमार जयपाल के बीच सुलह की कोशिश कर रहे हैं। 14 अगस्त को हेमंत भाटी के जन्मदिन पर गहलोत समर्थक नेताओं ने उनके निवास पर पहुंचकर शुभकामनाएं दी थीं और बातचीत के रास्ते बहाल किए।

महापौर की महिला सीट ने बढ़ाई प्रतिस्पर्धा

- इस बार अजमेर नगर निगम में महापौर का पद महिला के लिए आरक्षित है। इसके चलते भाजपा और कांग्रेस दोनों में महिला चेहरों को लेकर राजनीतिक सक्रियता बढ़ी है। कई प्रभावशाली नेता ऐसे वार्ड से अपनी पत्नी, परिवार की महिला सदस्य या समर्थक महिला नेता को टिकट दिलाने का प्रयास कर सकते हैं, जहां से जीत के बाद महापौर पद की दावेदारी बनाई जा सके।
- यानी कुछ वार्डों का टिकट केवल 'कौन पार्षद बनेगा' के आधार पर नहीं, बल्कि 'जीतने के बाद कौन बनेगा महापौर' की रणनीति से भी देखा जाएगा। यही परिस्थिति भीतरघात का एक नया कारण पैदा कर सकती है।

80 वार्ड, 80 अलग-अलग समीकरण

- आरक्षण व्यवस्था के बाद लगभग सभी 80 वार्डों में कई पुराने समीकरण बदल चुके हैं। शहर में एक साथ चुनाव होने के बावजूद हर वार्ड की अपनी अलग राजनीति होती है। कहीं जातीय समीकरण प्रभावी होता है, कहीं उम्मीदवार का व्यक्तिगत संपर्क। कहीं पार्टी का परंपरागत वोट निर्णायक है तो कहीं स्थानीय समस्या और पार्षद का पांच साल का काम। ऐसी परिस्थिति में पार्टी की अंदरूनी एकजुटता महत्वपूर्ण हो जाती है। लोकसभा चुनाव में पार्टी की बड़ी लहर असंतोष को दबा सकती है, लेकिन पार्षद के चुनाव में दस-पंद्रह प्रभावशाली परिवारों का रुख भी परिणाम बदल सकता है।

टिकट घोषित होने के बाद सामने आएगी असली तस्वीर

अभी दोनों पार्टियों में दावेदारी का दौर है। हर नेता निष्ठा की बात कर रहा है, लेकिन असली राजनीतिक तस्वीर उम्मीदवारों की सूची जारी होने के बाद सामने आएगी। तब तीन तरह के नेता दिखाई देंगे, टिकट पाने वाले, टिकट कटने के बाद पार्टी के साथ खड़े रहने वाले और टिकट कटने के बाद हिसाब चुकाने वाले। तीसरी श्रेणी भाजपा और कांग्रेस दोनों के लिए सबसे बड़ी चिंता होगी। नगर निगम चुनाव में कई बार पार्टी प्रत्याशी विरोधी दल से नहीं, बल्कि अपने ही संगठन की नाराजगी से हारता है। उम्मीदवार चुनाव मैदान में सामने वाले प्रत्याशी को देखता रहता है जबकि राजनीतिक जमीन

मुकाबला भाजपा-कांग्रेस का, लेकिन चाबी 'अपनों' के हाथ

इस तरह नगर निगम चुनाव बेहद दिलचस्प रहने वाला है। एक तरफ भाजपा सत्ता, संगठन और अपने परंपरागत आधार के भरोसे मैदान में उतरेगी, लेकिन धर्मेंद्र गहलोत प्रकरण ने उसकी अंदरूनी राजनीति को चुनाव से ठीक पहले चर्चा के केंद्र में ला दिया है। दूसरी तरफ कांग्रेस भाजपा की इस कमजोरी का लाभ उठाना चाहेगी, लेकिन पहले उसे अपने ही गहलोत-पायलट खेमों के बीच राजनीतिक तालमेल की परीक्षा पास करनी होगी। इसलिए इस बार अजमेर नगर निगम चुनाव का सबसे महत्वपूर्ण सवाल शायद यह नहीं होगा कि भाजपा मजबूत है या कांग्रेस, बल्कि यह होगा कि कौन-सी पार्टी अपने नाराज नेताओं और टिकट से वंचित दावेदारों को बेहतर तरीके से संभाल पाती है? क्योंकि 80 वार्डों की इस लड़ाई में कई सीटों पर हार-जीत का अंतर बहुत छोटा हो सकता है। यदि टिकट वितरण के बाद दोनों दलों में बगावत और भीतरघात बढ़ा, तो अजमेर नगर निगम की सत्ता का फैसला सिर्फ मतदाता नहीं बल्कि पार्टी के भीतर बैठे असंतुष्ट चेहरे भी कर सकते हैं।

वृहत् सांस्कृतिक मनीषा का पर्याय है हिन्दी

हिन्दी केवल भाषा नहीं, भारतीय संस्कृति, इतिहास और चिंतन की जीवंत अभिव्यक्ति है। इसकी समावेशी प्रकृति ने इसे विविध भाषाओं और बोलियों को आत्मसात करने वाली शक्ति दी है।

डॉ. राकेश तैलंग,
शिक्षाविद् एवं पूर्व शिक्षा अधिकारी

हिन्दी मात्र एक भाषा नहीं, वह भारतीय इतिहास, दर्शन, संस्कृति की अभिव्यक्ति का एक शाब्दिक, अनुभूतिपरक व संप्रेषणीय सार्थक प्रस्तुति शैलियों का सशक्त माध्यम है और स्वयं में एक वृहत् सांस्कृतिक मनीषा का पर्याय ही है। ग्यारहवीं शताब्दी में तलवारों की खनखनाहटों के साथ वीरगाथाओं और आल्हा के माध्यम से जोश की अभिव्यक्ति बन पन्द्रहवीं सदी में सूर, मीरां और तुलसी की जुबां पर कृष्ण और राम की भक्ति का गान करती हुई सत्रहवीं शताब्दी तक आते-आते अलंकार, छंद, रस, रीति से दरबारों की प्रिय ललित ललाम अभिव्यक्ति बन गई हिन्दी। कब भारतीय स्वतंत्रता के ओजस्वी गान का माध्यम बन कभी बदलते भारतीय समाज के विकास की गाथा तो कभी नक्षत्रों से निमंत्रण देती मौन अनुभूत ईश्वरीय छाया की रहस्यात्मक अभिव्यक्ति बन कवि वाणी में फूटकर शनैः-शनैः आधुनिक समाज के विविध रंगों से स्नात हो आधुनिकता बोध की व्यंजना का माध्यम बन गयी, पता ही न चला। ऐसी विविध रूपा हिन्दी प्रतिदिन कथित आधुनिक भारतीयों द्वारा अपमानित होते रहने के बाद आज भी हिन्दी इन कूढ़मगजों के मानवीय एहसासों को सरलता के साथ व्यक्त करने का कार्य कर रही है। इस भाषा के बिना हर्षवर्धन युग से लेकर अब तक के साहित्य-सृजन और प्रयोजनमूलक सभी विषयों पर हुए लेखन को समझना कठिन है। इसे उपेक्षित करने वालों के अभिव्यक्ति-स्तर को समझने का प्रयास करें। सच तो यह कि इन भाषाओं की प्रकृति को जानने समझने की तहज़ीब ही पैदा की नहीं। फिर अपनी अभिव्यक्ति के लिये प्रभावी सम्प्रेषण की भाषा का चयन तो बहुत दूर की बात है। ऐसे शून्य में अभिव्यक्ति के तीर छोड़ने वालों के लिए 'अंतःप्रेक्षण' (यह शब्द इनको समझ नहीं आएगा) का दिन है आज।

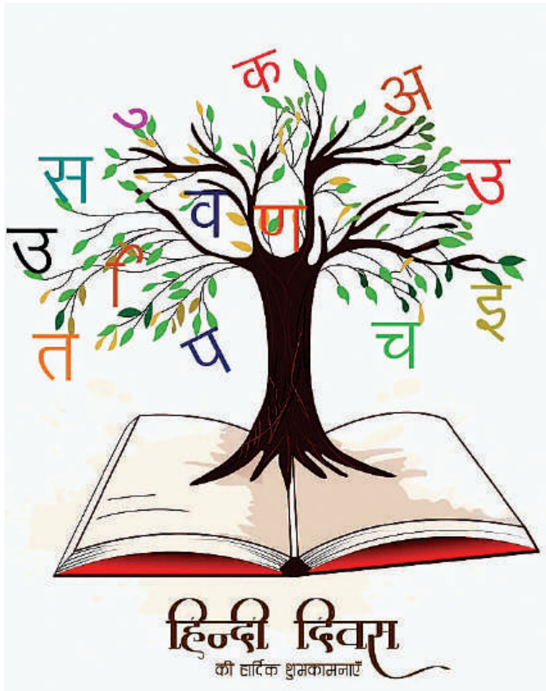

इन पंक्तियों के लेखक को ऐसा प्रतीत होता है कि किसी भी अभिव्यक्ति के मौलिक या लिखित माध्यम की प्रभावी सम्प्रेषणीयता का एक प्रधान मानक है उसकी बहिर्मुखता या समाहारमूलक प्रकृति। अन्य शब्दों में हिन्दी संस्कृत के समान संश्लेषणात्मक भाषा न होकर विश्लेषणात्मक अथवा विरल भाषा है। और अधिक स्पष्ट कहें तो अन्य भाषाओं व बोलियों को स्वयं में समाहित या स्वीकार करने की दिशा में अत्यधिक उदार है। यह विशेषता हिन्दी के शब्दकोश के विस्तार का कारण बनी है और अन्य भाषाभाषियों, वैदेशिक, प्रान्तीय, आंचलिक- सभी के लिए स्वीकार और वह भी सुमन व सुगन्ध के रूप में स्वीकार का कारण बनी है। ऐसी समाहारी प्रकृति वाली हिन्दी हमारी भाषा हो, यह गौरव का विषय क्यों न हो?

हम भारतीयों की भांति हमारी हिन्दी भी मिलनसार भी है, सर्वसमावेशी भी है। अन्य भाषाओं व बोलियों के प्रति यह उदार व्यवहार हिन्दी की प्रकृति व प्रवृत्ति है। जीवित भाषाएं इसी निपुणता से एक विशेष शिल्प, बहिर्मुख और स्वीकार-सहकार की राह पर चलकर नेतृत्व की डोर देर ही सही, अपने हाथ में लेकर बढ़ सकती हैं।

क्योंकि निरंतर विकसित होते जा रहे हिन्दी शब्दकोश ने हमारी हिन्दी को भाव व भाषागत अभिव्यक्ति शिल्प की दृष्टि से बहुत अधिक सम्प्रेषणीय बनाया है, अतएव हमें हिन्दी प्रयोग से किसी को भी प्रभावित व उत्प्रेरित करने में कोई समस्या नहीं हो सकती। यह भाषायी अभिव्यक्ति में नैपुण्य हमारी भाषा की अन्तर्हित क्षमता है। इस पर हमें गौरवान्वित होना चाहिये। यह आत्मविश्लेषण का विषय है कि भाव-विचार, शैली, प्रस्तुति की नवीन प्रविधियां हिन्दी भाषा, साहित्य व व्यावहारिक व्याकरण (Functional Grammar) के क्षेत्र में कैसे नए से नए अभिव्यक्ति परिदृश्य खोल सकती हैं? यह व्यापकता हिन्दी में अन्य भाषा-साहित्य व परिभाषिक शब्दावलियों के लिए स्वयं के निरंतर विकसित होते जा रहे शब्दकोश के कारण विपुल संभावनाएं प्रशस्त कर सके, ऐसी उम्मीद हम कर सकते हैं।

जन्माष्टमी विशेष

मन वृंदावन

सपनों सा लगता वृंदावन
अपनों सा लगता वृंदावन
कितने ही युग बीते गए पर
मन वृंदावन

वृंद विपिन की गलियों का वह
निःशब्द संवाद
लीला भाव अलौकिक मनोरम
आता अब भी याद

कालिंदी का कलित कुंज
लगता वृंदावन
कितने ही युग बीत गए पर
मन वृंदावन

थके हुए यायावर को
अब पास बुलाता
थपक हथेली से जो
मीठी नींद सुलाता

दूध दही माखन मिश्री का
लोक लुभावन
कितने ही युग बीत गए पर
मन वृंदावन

बृज भूमि, बृज भाव समन्वित
सुख संसाधन
गोधन गोबर दूध सुगंधित
नंदन कानन

विद्वतजन भगवदीयों का
आशीष प्रकाशन
कितने ही युग बीत गए पर
मन वृंदावन

कविता में शब्दों की ताकत

कविता केवल शब्दों का संयोजन नहीं, बल्कि अनुभव, संवेदना और कल्पना को अर्थ देने की कला है। भाषा उसका माध्यम है, जो साधारण शब्दों को नए अर्थ और भाव देती है।

दिनेश सिंदल,
कवि, लेखक

आपके पास धागों का एक गुच्छा है। उसे आप पहन नहीं सकते। किंतु अगर इन धागों को तरतीब दे दी जाए तो वह कपड़ा बन जाएगा। अब उसे आप पहन सकते हैं। उसे ओढ़ सकते हैं। यह तरतीब देना कविता है। भाषा (शब्द) धागे हैं। कविता में भाषा का इतना ही काम है।

भाषा कविता का उपकरण है। जैसे चित्रकार के लिए रंग और तुलिका। संगीतकार के लिए स्वर, वाद्ययंत्र, वैसे ही कवि के लिए भाषा। उपकरण अपने आप में कला नहीं है। इसी तरह सिर्फ भाषा से कविता नहीं होती। कविता का जन्म कवि की संवेदना, अनुभव, कल्पना, दृष्टि और सृजनात्मकता से होता है। भाषा उन सबको रूप देने का माध्यम है। भाषा एक टूल है। आप अपने टूल को कितने अच्छे से इस्तेमाल करते हैं यह आपका कौशल है।

कविता में शब्द इशारे होते हैं। वे हमें वह दिखाने का प्रयास करते हैं जो हमारा सत्य है। जो हमारा साध्य है। भाषा साध्य नहीं, साधन है। साध्य तो वह है, जिसे हम कह नहीं पा रहे। कविता की आवश्यकता ही इसलिए पड़ती है कि हमें वह कहना होता है जो साधारण भाषा में कहा नहीं जा सकता। कविता उस अनुभव को भाषा देने का प्रयास है, जिसे साधारण भाषा पूरी तरह कह नहीं पाती। या कविता वह कहने की कोशिश है जिसे केवल शब्दों में कह देना संभव नहीं। यह भी सच है कि कविता भाषा से ही बनती है। किंतु कवि भाषा की व्यक्त करने की सीमा को पार करता है। उसका अतिक्रमण करता है। वह शब्दों को नए अर्थ प्रदान करता है। एक शब्द है 'साफ'। इसके प्रयोग देखें- साफ-साफ कहो, अपने कमरे को साफ रखो, मेरा हिसाब साफ कर लो। सभी जगह 'साफ' अलग-अलग अर्थ दे रहा है।

एक और उदाहरण देखें। शब्द है 'खराब'। इसके प्रयोग देखें- बुखार से मुंह का स्वाद खराब हो गया। समय खराब चल रहा है। कीचड़ से मेरे कपड़े खराब हो गए। यहां खराब सभी जगह अलग-अलग अर्थ दे रहा है। इसलिए कहते हैं कि कवि के लिए शब्द शब्दकोश से नहीं आते। वे उसके अनुभव से आते हैं। इस तरह के कई शब्द, कई भाषाई मुहावरे आपको मिल जाएंगे।

शब्द एक दिन में नहीं बनते। वे समाज के लंबे अनुभव, उच्चारण, जरूरत और प्रयोग से धीरे-धीरे प्रचलित होते हैं, आकार लेते हैं। फिर वे शब्दकोश में आते हैं।

भाषा में समय के साथ-साथ शब्द जुड़ते रहते हैं। घिसते रहते हैं। मिटते रहते हैं। वे जनता के बीच पैदा होते हैं। पलते हैं, जीते हैं और फिर शब्दकोश में स्वीकृत कर लिए जाते हैं। शब्द पहले आमजन में स्वीकृत होता है, फिर शब्दकोश में आता है।

आज हम जिसे हिंदी कहते हैं, उसमें कई भाषाओं, कई बोलियों के शब्द मिल जाएंगे। अन्य भाषाओं के शब्द को आत्मसात करना, उन्हें अपने व्याकरण के नियमों के आधार पर बरतना भाषा को समृद्ध बनाता है। किसी भाषा की यह स्वीकृति ही उसे जीवित रखती है, प्रवाहमान रखती है। अन्य भाषाओं के शब्दों को अपनी भाषा में परिचित करवाने का काम रचनाकार करता है। इसमें फिल्म और मीडिया की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

अन्य भाषा से आया हुआ शब्द किसी भाषा में कभी-कभी इतना घुल मिल जाता है कि मालूम ही नहीं पड़ता कि वह आयातित है। आप अपने आसपास अगर दृष्टि डालें तो ऐसे कई शब्द मिल जाएंगे।

भाषा के इस समन्वय में कभी-कभी दो अलग-अलग भाषाओं के शब्द मिलकर एक शब्द का निर्माण कर लेते हैं और वह शब्द कालांतर में स्वीकृत हो जाता है। जैसे- रेलगाड़ी, यहां 'रेल' अंग्रेजी का और 'गाड़ी' हिंदी का शब्द है। जैसे- लाठीचार्ज, यहां 'लाठी' हिंदी का और 'चार्ज' अंग्रेजी का शब्द है।

इसी तरह से फारसी और हिंदी के कई युग्म शब्द मिल जाएंगे। जैसे- शादी-ब्याह, खोज-खबर, रंग-रूप, रंग-ढंग, धन-दौलत, हंसी-मजाक, चोली-दामन, खुले-आम इत्यादि। यहां एक शब्द फारसी का है और दूसरा हिंदी का। ये आम-फहम मुहावरे हैं, जिन्हें पृथक करना मुश्किल है। इन्हें अलग करना भाषा के साथ न्याय नहीं है।

कई मुहावरे हमारी भाषा में ऐसे हैं जिनमें अरबी-फारसी के शब्द हैं। अगर हम उन शब्दों को निकाल लें तो हमारी भाषा बिगड़ जाएगी। जैसे- राह फारसी का शब्द है। इसे अगर हम अपनी भाषा से निकाल लें तो हम यह नहीं बोल सकते- राह पर लगना, राह पर लाना, अपनी राह लो, राह कठिन है, राह में कांटे बिछाना, राह देखना, राह भूलना।

कुछ शब्द फंक्शनिंग होते हैं जैसे- ब्रेक। ब्रेक का अर्थ है तोड़ना, गाड़ी की स्पीड को तोड़ना। लेकिन जिससे ब्रेक लगता (स्पीड टूटती) है, उस उपकरण को भी हम ब्रेक ही कहते हैं। उसके लिए कोई दूसरा नाम ढूंढना भाषा को और मुश्किल बनाएगा। पंखा भी इसी तरह का शब्द है। जब वह हवा डाल रहा है तब वह पंखा है। रुका हुआ पंखा नहीं है। हम किसी किताब से भी पंखे का काम ले सकते हैं।

शब्द केवल अर्थ बताने का साधन नहीं है, बल्कि वह भाव, ध्वनि, चित्र और संवेदना भी पैदा करता है। कवि केवल शब्दों को जोड़ता नहीं, वह उनके बीच समन्वय, लय, ध्वनि, अर्थ और बिंब का ऐसा संबंध बनाता है कि सामान्य भाषा काव्य-भाषा में बदल जाती है।

इसीलिए काफ्का कहते हैं कि कवि जब कहता है- अमरूद, तो सुनने वाले के मुंह में अमरूद का स्वाद आ जाता है।

भारत कब बनेगा खेल महाशक्ति?

अजय अस्थाना
वरिष्ठ पत्रकार

भारत खेलों में तेजी से आगे बढ़ रहा है, लेकिन पेरिस ओलंपिक ने एक बड़ा सवाल भी खड़ा किया। 140 करोड़ से अधिक आबादी वाला देश छह पदकों पर संतोष करता है, जबकि उससे बहुत छोटे देश 20, 30 और उससे अधिक पदक जीत जाते हैं। आखिर उनकी तैयारी में ऐसा क्या है, जो भारत को सीखना चाहिए?

भारत में जब भी खेल की बात होती है, क्रिकेट सबसे पहले सामने आता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि भारत आज क्रिकेट की दुनिया की बड़ी शक्ति है। आर्थिक संसाधन, दर्शक, घरेलू प्रतियोगिताएं, प्रायोजन और खिलाड़ियों के अवसर, लगभग हर क्षेत्र में भारतीय क्रिकेट ने विश्वस्तरीय व्यवस्था खड़ी कर दी है। लेकिन असली सवाल यह है कि क्या क्रिकेट के बाहर भी भारत उसी दिशा में बढ़ रहा है? क्या भारत समग्र खेल महाशक्ति बनने की राह पर है?

इस सवाल का जवाब निराशाजनक नहीं है। भारतीय खेलों की तस्वीर निश्चित रूप से बदली है। टोक्यो ओलंपिक में भारत ने सात पदक जीते। नीरज चोपड़ा के स्वर्ण ने एथलेटिक्स को नई पहचान दी। पेरिस ओलंपिक में भारत ने छह पदक हासिल किए। 2023 के एशियाई खेलों में भारत ने पहली बार 100 का आंकड़ा पार करते हुए 107 पदक जीते। इनमें 28 स्वर्ण, 38 रजत और 41 कांस्य पदक थे। एथलेटिक्स ने 29 और निशानेबाजी ने 22 पदक दिए। सरकार भी खेल पर पहले से अधिक ध्यान दे रही है। प्रतिभा खोज, प्रशिक्षण, खेल विज्ञान और बुनियादी ढांचे पर निवेश बढ़ाने की दिशा में योजनाएं बनाई जा रही हैं।

यह कहना भी उचित नहीं होगा कि भारत ने खेलों में प्रगति नहीं की है। निःसंदेह भारत ने पिछले कुछ वर्षों में लंबी दूरी तय की है। ओलंपिक में पदक आए हैं, एशियाई खेलों में प्रदर्शन बेहतर हुआ है, नए खेलों में भारतीय खिलाड़ी उभर रहे हैं और खेलों के प्रति समाज की सोच भी बदली है। लेकिन जब इसी प्रगति को हम उन छोटे देशों की सफलता के आईने में देखते हैं, तो निराशा जरूर होती है। तब हमारी प्रगति काफी धीमी लगने लगती है। सवाल भारत की उपलब्धियों को नकारने का नहीं, बल्कि यह समझने का है कि हमारी विशाल आबादी, प्रतिभा और बढ़ते संसाधनों के बावजूद हम अपनी संभावनाओं के अनुरूप गति क्यों नहीं पकड़ पा रहे हैं।

खेल संस्कृति को जनआंदोलन बनाना होगा

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने खेलो इंडिया संवाद में कहा कि भारत अभी ओलंपिक के आधे खेलों में भी हिस्सा नहीं लेता और इसमें सुधार की आवश्यकता है। उनका जोर केवल पदक जीतने पर नहीं, बल्कि ओलंपिक में भारत की भागीदारी का दायरा बढ़ाने और अभी से खिलाड़ियों को तैयार करने पर था। उन्होंने यह भी कहा कि युवाओं को स्क्रीन से ज्यादा खेल के मैदान की जरूरत है। बच्चों को शुरुआती उम्र से ही मैदान तक पहुंचाना होगा। जब खेल स्कूल, परिवार और समाज की रोजमर्रा की संस्कृति का हिस्सा बनेगा, तभी भारत की विशाल युवा आबादी वास्तविक खेल शक्ति में बदल सकेगी।

छोटे देश हमसे आगे क्यों?

पेरिस ओलंपिक इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। भारत ने छह पदक जीते, जबकि नीदरलैंड ने 34, न्यूजीलैंड ने 20 और ऑस्ट्रेलिया ने 53 पदक हासिल किए। यह तुलना भारत को छोटा दिखाने के लिए नहीं है। बल्कि यह पूछने के लिए है कि इतने बड़े देश में प्रतिभा और संसाधन होने के बावजूद पदकों की संख्या अपेक्षाकृत कम क्यों है? क्या वहां के बच्चे हमसे ज्यादा प्रतिभाशाली हैं? शायद नहीं। अंतर कहीं और है और वह है तैयारी की व्यवस्था।

नीदरलैंड में सरकार और राष्ट्रीय ओलंपिक समिति मिलकर उच्चस्तरीय खिलाड़ियों के प्रशिक्षण, प्रतिभा खोज और प्रशिक्षकों के विकास में निवेश करते हैं। वहां खिलाड़ी के खेल जीवन के साथ शिक्षा और रोजगार की जरूरतों को भी व्यवस्था का हिस्सा माना जाता है।

न्यूजीलैंड का उदाहरण भारत के लिए और भी महत्वपूर्ण है। 2025 से पात्र उच्चस्तरीय खिलाड़ियों को 50 हजार न्यूजीलैंड डॉलर सालाना तक का प्रशिक्षण अनुदान और संभावित खिलाड़ियों को 25 हजार डॉलर तक की सहायता दी जा रही है। इसके साथ चिकित्सा बीमा तथा पोषण, फिजियोथेरेपी, खेल विज्ञान, मानसिक स्वास्थ्य और प्रदर्शन संबंधी विशेषज्ञ सहायता भी उपलब्ध है। 2025 से 2028 के चार साल के चक्र में न्यूजीलैंड की उच्च प्रदर्शन खेल व्यवस्था 36 राष्ट्रीय खेल संगठनों के लिए 162.8 मिलियन न्यूजीलैंड डॉलर का प्रत्यक्ष निवेश कर रही है। इसके अलावा खिलाड़ियों के आर्थिक और प्रदर्शन सहयोग के लिए सालाना 22 मिलियन डॉलर की व्यवस्था है। यही वह जगह है जहां भारत को आत्ममंथन करना चाहिए।

भारत में प्रोत्साहन भी कम नहीं

हमारे यहां पदक जीतने के बाद खिलाड़ी पर पुरस्कारों की बारिश होती है। सरकारी सम्मान, नकद पुरस्कार, नौकरी और सार्वजनिक अभिनंदन, यह सब जरूरी भी है और खिलाड़ियों का मनोबल भी बढ़ाता है। लेकिन क्या हमें पदक के बाद पुरस्कार देने से ज्यादा ध्यान पदक से पहले की तैयारी पर नहीं देना चाहिए? पदक जीतने वाले खिलाड़ी का सम्मान करने से ज्यादा जरूरी है पदक जीतने वाला खिलाड़ी तैयार करना।

इसके लिए सबसे पहले प्रतिभा खोज की पूरी व्यवस्था बदलनी होगी। भारत को ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में व्यापक, नियमित और वैज्ञानिक प्रतिभा खोज अभियान चलाना चाहिए। केवल कुछ प्रतियोगिताएं आयोजित कर देने को प्रतिभा खोज नहीं कहा जा सकता। हर स्कूल, पंचायत, ब्लॉक और जिले तक ऐसी व्यवस्था पहुंचनी चाहिए, जिसमें बच्चों की शारीरिक क्षमता, गति, सहनशक्ति और विभिन्न खेलों के प्रति स्वाभाविक योग्यता को पहचाना जा सके।

आज भी गांव का कोई बच्चा असाधारण प्रतिभा रखता है तो उसका आगे बढ़ना कई बार इस बात पर निर्भर करता है कि उसे पहचानने वाला कोई जागरूक शारीरिक शिक्षक या प्रशिक्षक मिल गया या नहीं। यदि किसी पीटीआई ने गंभीरता दिखाई, बच्चे की प्रतिभा पहचानी और उसे सही खेल तथा सही प्रशिक्षण तक पहुंचाया, तो प्रतिभा निकल आती है। अन्यथा वही प्रतिभा गांव तक सीमित रह जाती है।

भारत में प्रतिभा की कमी नहीं है, प्रतिभा खोजने वाली नजर की कमी है। हर जिले का अपना खेल मानचित्र भी तैयार किया जा सकता है। जहां कुश्ती और मुक्केबाजी की प्रतिभा अधिक है, वहां उन्हीं खेलों के उत्कृष्टता केंद्र बनाए जाएं। कहीं तीरंदाजी, कहीं एथलेटिक्स, कहीं हॉकी और कहीं निशानेबाजी।

भारत में अनेक युवा खेल इसलिए चुनते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि खेल के माध्यम से सेना, पुलिस, रेलवे या किसी सरकारी विभाग में नौकरी मिल सकती है। आर्थिक सुरक्षा के लिए यह आकर्षण स्वाभाविक है, लेकिन यदि नौकरी खेल का मुख्य उद्देश्य बन जाए तो विश्वस्तरीय खिलाड़ी बनने के लिए जरूरी जुनून और दीर्घकालीन प्रतिबद्धता पैदा होना कठिन है।

हमें ऐसी व्यवस्था बनानी होगी जिसमें बच्चा पहले खेलना पसंद करे, फिर उसमें उत्कृष्टता हासिल करने का सपना देखे और उसके बाद खेल उसके लिए सम्मानजनक करियर बने। नौकरी उसका सहारा हो, खेल का एकमात्र लक्ष्य नहीं। यहां प्रशिक्षकों की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। सवाल यह नहीं होना चाहिए कि भारतीय प्रशिक्षक अच्छे हैं या विदेशी प्रशिक्षक।

विदेशी विशेषज्ञ से केवल तकनीक सीखना पर्याप्त नहीं। हमें उनसे आंकड़ों पर आधारित प्रशिक्षण, आधुनिक तकनीक, प्रदर्शन विश्लेषण, चोट से बचाव, पोषण, मानसिक तैयारी और दीर्घकालीन योजना सीखनी होगी। विश्वस्तरीय खिलाड़ी केवल एक कोच नहीं बनाता। उसके पीछे प्रशिक्षक, खेल वैज्ञानिक, चिकित्सक, फिजियोथेरेपिस्ट, पोषण विशेषज्ञ, मनोवैज्ञानिक और प्रदर्शन विश्लेषक की पूरी टीम होती है। इसलिए भारत को विदेशी प्रशिक्षकों की संख्या नहीं, विदेशी प्रशिक्षण संस्कृति से सीखने की जरूरत है।

खेल विज्ञान और तकनीक को केवल कुछ शीर्ष खिलाड़ियों तक सीमित रखने के बजाय प्रतिभा विकास के शुरुआती चरणों तक ले जाना होगा। खिलाड़ी की नींद, भोजन, शरीर की क्षमता, चोट का जोखिम और प्रदर्शन के आंकड़ों का वैज्ञानिक विश्लेषण अब विलासिता नहीं, आवश्यकता है।

महिला खिलाड़ियों की बढ़ती सफलता भी भारतीय खेल की नई ताकत है। मनु भाकर, पीवी सिंधु, मीराबाई चानू और निकहत जरीन जैसी खिलाड़ियों ने साबित किया है कि अवसर मिलने पर भारतीय महिलाएं विश्व स्तर पर मुकाबला कर सकती हैं। लेकिन सुरक्षित प्रशिक्षण, छात्रावास, महिला प्रशिक्षक, आर्थिक सहायता और परिवार का भरोसा अभी भी जरूरी हैं।

भारत के पास प्रतिभा है। युवा शक्ति है। आर्थिक क्षमता बढ़ रही है। सरकार का निवेश भी बढ़ रहा है। फिर भी हमें छोटे देशों से सीखना होगा कि पदक संयोग से नहीं आते, पदक तैयार किए जाते हैं। हमें पदक जीतने वाले खिलाड़ियों का उत्सव मनाने से आगे बढ़कर पदक जीतने वाली व्यवस्था बनानी होगी।

हर गांव में स्टेडियम जरूरी नहीं, लेकिन हर गांव में प्रतिभा पहचानने वाली नजर जरूरी है। हर जिले में हर खेल का केंद्र जरूरी नहीं, लेकिन हर जिले की खेल क्षमता पहचानना जरूरी है। हर खिलाड़ी को पदक के बाद करोड़ों का पुरस्कार देने से ज्यादा जरूरी है उसे पदक से पहले वर्षों की निश्चित आर्थिक और वैज्ञानिक सहायता देना। तभी खेल नौकरी पाने का रास्ता नहीं, उत्कृष्टता हासिल करने का माध्यम बनेगा।

भारत क्रिकेट की महाशक्ति बन चुका है। अब उसे क्रिकेट की सफलता से सीख लेकर दूसरे खेलों के लिए भी वही पेशेवर, वैज्ञानिक और दीर्घकालीन व्यवस्था बनानी होगी। आखिर सवाल यह नहीं कि 140 करोड़ से अधिक आबादी वाला भारत छह पदक पाकर खुश क्यों हो। सवाल यह है कि इतने बड़े देश में ऐसी व्यवस्था क्यों न हो, जहां हर ओलंपिक में पदक जीतने के लिए हमारे पास दर्जनों मजबूत दावेदार हों?

भारत की प्रगति को नकारा नहीं जा सकता, लेकिन अब गति बढ़ाने का समय है। जब प्रतिभा खोजने से लेकर विश्वस्तरीय प्रदर्शन तक पूरी व्यवस्था मजबूत होगी, तभी भारत केवल क्रिकेट महाशक्ति नहीं, बल्कि वास्तविक खेल महाशक्ति कहलाने का अधिकार हासिल करेगा।

दिल की चौखट पर दस्तक

सुधांशु टाक
लेखक, समीक्षक

करोड़ों के तमाशे से परे, 'आवारापन 2' और 'बंटवारा 1947' जैसी फिल्में टिकट खिड़की की अंधी दौड़ नहीं, बल्कि इंसानी दर्द, तड़प और बिखरे रिश्तों को छूकर दर्शकों के सीधे दिल में उतरने की पुरजोर कोशिश हैं।

आज का सिनेमाई माहौल भारी-भरकम बजट, तकनीकी तड़क-भड़क और अंधाधुंध कमाई के दावों के बीच सांस ले रहा है। स्क्रीन पर विशेष प्रभावों की ऐसी आंधी चल रही है जहां हर दूसरी कहानी में एक ऐसा नायक खड़ा कर दिया जाता है जो हवा में तैर सकता है, गोलियों की बौछार से बेअसर निकल जाता है और अकेले ही पूरी दुनिया को फतह कर लेता है। लेकिन इस तकनीकी चकाचौंध और कानफाड़ू शोर के बीच सिनेमा से एक बहुत बुनियादी बात कहीं गुम हो गई थी, वह थी इंसान के भीतर का सच्चा एहसास, उसकी खामोशी, उसका दर्द और उसकी रूहानी तड़प। ऐसे मशीनी दौर में जब 'आवारापन 2' और 'बंटवारा 1947' जैसी फिल्में पर्दे पर उतरती हैं, तो वे सिर्फ मनोरंजन का साधन बनकर नहीं रह जातीं, बल्कि दर्शकों की सोई हुई संवेदनाओं को धीरे से झकझोरने का जरिया बन जाती हैं। बॉक्स ऑफिस का गणित अपनी जगह एक कारोबारी सच्चाई हो सकता है, मगर सिनेमा की असली ताकत हमेशा से इंसान को उसकी अपनी ही भावनाओं के रूबरू खड़ा करने में रही है।

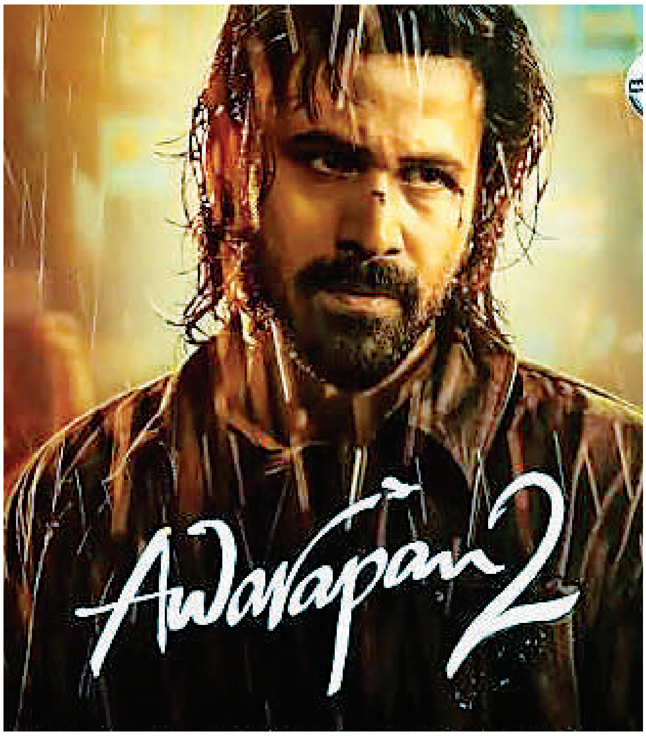

'आवारापन 2'
तालियों से परे अंतर्मन का दर्द

मुख्यधारा की कारोबारी फिल्मों ने लंबे समय से दर्शकों के सामने एक ऐसी बनावटी दुनिया परोसी है जहां सब कुछ या तो बहुत उजला होता है या फिर बिल्कुल स्याह। नायक से कभी कोई चूक नहीं हो सकती और खलनायक में अच्छाई का कोई कतरा नहीं बचता। इसके ठीक उलट, 14 अगस्त 2026 को सिनेमाघरों में दस्तक देने वाली 'आवारापन 2' की जमीन एक ऐसे किरदार पर टिकी है जो अपने ही अतीत के गुनाहों, पछतावे और गहरे अकेलेपन के बोझ तले दबा हुआ है। वह कोई आदर्श पुरुष नहीं, बल्कि जिंदगी की ठोकरों से लहूलुहान एक टूटा हुआ इंसान है।

दर्शकों का ऐसे किरदारों से जुड़ाव इसलिए नहीं होता कि वे कोई करामात दिखाते हैं, बल्कि इसलिए होता है क्योंकि आम इंसान की जिंदगी भी कभी पूरी तरह बेदाग नहीं होती। हर सीने में कहीं न कहीं एक अनकहा मलाल होता है, कुछ खोने की मद्धम सी टीस होती है और खुद को सुधारने की एक मूक छटपटाहट होती है। जब पर्दे पर भटकता नायक अपनी मुक्ति की तलाश में किसी दूसरे की जिंदगी संवारने के लिए खुद को दांव पर लगाता है, तो दर्शक केवल ताली नहीं बजाता, बल्कि उस भारीपन को अपने भीतर महसूस करता है।

साल 2007 में आई ओरिजिनल 'आवारापन' भले ही उस वक्त थिएटर्स में कोई बड़ा कमाल न दिखा पाई हो, लेकिन अपने इमोशनल कंटेंट और सदाबहार गानों की बदौलत उसने सालों में एक 'कल्ट' पहचान बनाई थी। अब लगभग दो दशक बाद आए उसके इस सीक्वल को उस पुरानी दीवानगी का भरपूर फायदा मिल रहा है और दर्शक भारी तादाद में सिनेमाघरों का रुख कर रहे हैं। नितिन कक्कड़ के निर्देशन में बनी इस आवारापन-2 फिल्म में इमरान हाशमी के साथ दिशा पटानी और शबाना आजमी भी मुख्य भूमिकाओं में नजर आ रही हैं।

'बंटवारा 1947'
इंसानियत के रिसते जख्म

दूसरी तरफ, जब हम 'बंटवारा 1947' जैसी विषयवस्तु से रूबरू होते हैं, तो यह केवल इतिहास की तारीखों या दो मुल्कों के सियासी फैसलों का सूखा ब्योरा नहीं रह जाती। इतिहास के पन्नों में दर्ज आंकड़े कभी उस कड़वी हकीकत का दर्द बयां नहीं कर सकते जो किसी का घर, आंगन और अपनी मिट्टी एक झटके में छूट जाने पर महसूस होती है। यह फिल्म दर्शकों के करीब इसलिए पहुंचती है क्योंकि यह सियासत के चश्मे को उतारकर इंसानियत के जख्मों पर बात करती है।

विभाजन सिर्फ जमीन के एक टुकड़े पर खिंची लकीर नहीं थी, वह साझे संस्कारों, बचपन की गलियों और पीढ़ियों से बसे भरोसे का कत्ल था। जब कोई बुजुर्ग अपनी छूटी हुई चौखट को याद करके सिसकता है या अपनी ही जमीन से बेदखल होकर दूसरी जगह शरणार्थी बनता है, तो वह दर्द किसी एक मुल्क या खास दौर की सीमा में नहीं बंधता। वह दर्द हर उस दिल का हो जाता है जिसने कभी अपने घर की महक और अपनों का साया खोया हो।

कुछ दशक पूर्व मशहूर राइटर असगर वजाहत ने बंटवारे के हादसों पर आधारित एक नाटक 'जिस लाहौर नई वेख्या, ओ जम्या ए नईं' का निर्माण किया था, जिसका मतलब है कि जिसने लाहौर नहीं देखा, वो जन्मा ही नहीं। इसी नाटक पर डायरेक्टर राजकुमार संतोषी और निर्माता आमिर खान अपनी यह फिल्म 'बंटवारा 1947' लेकर आए, जिसमें सनी देओल, प्रीति जिंटा, शबाना आजमी जैसे मेगा स्टार्स शामिल रहे।

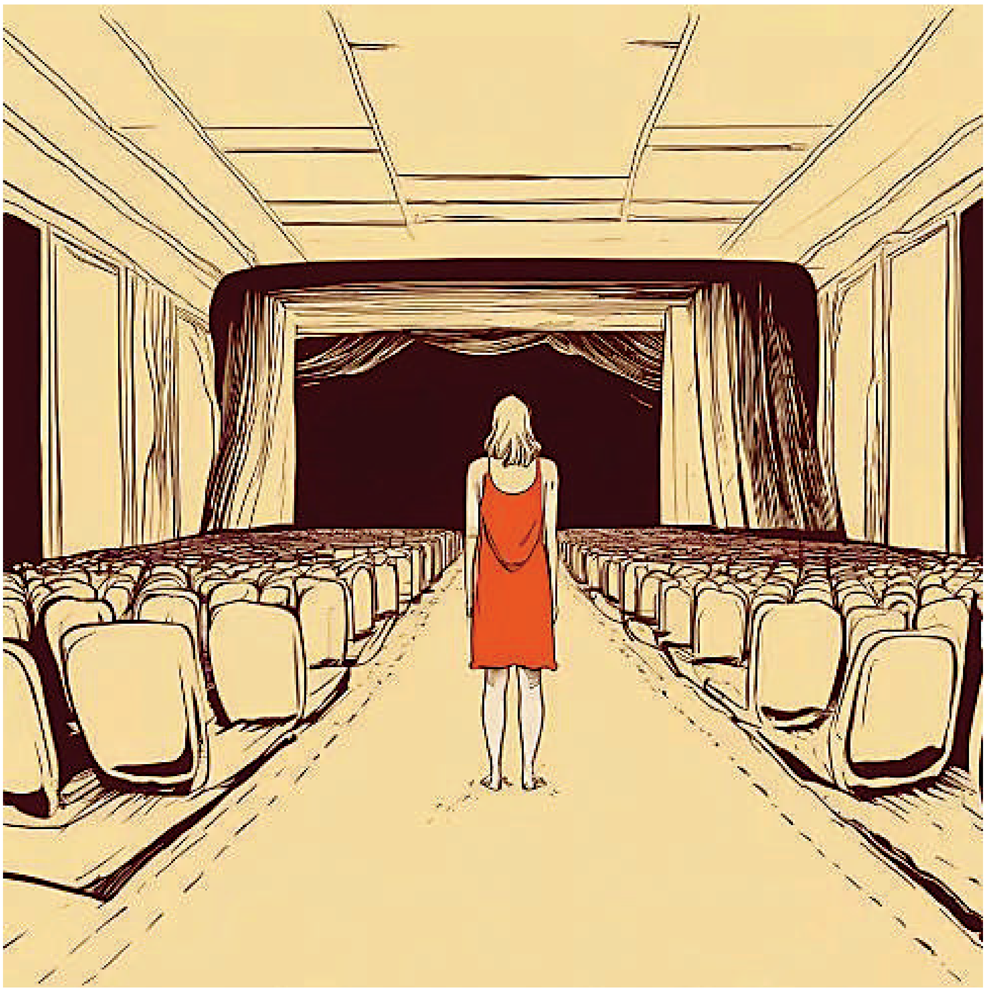

ठहराव और सन्नाटे की तासीर

आजकल सिनेमा में बैकग्राउंड स्कोर इतना लाउड कर दिया जाता है कि दर्शकों के सोचने-समझने की फुर्सत ही छिन जाए। हर दृश्य को जबरन ड्रामैटिक बनाने की अंधी होड़ मची है। लेकिन इन फिल्मों की असली ताकत उनके ठहराव और सन्नाटे में नजर आती है। एक बेहतरीन दृश्य वह होता है, जहां भारी-भरकम संवादों की जरूरत नहीं पड़ती, केवल किरदारों की खामोश आंखें बोलती हैं और उस खामोशी की गूंज सीधे दिल पर चोट करती है।
'आवारापन 2' का संगीत केवल गानों का पुलिंदा नहीं, बल्कि उस कहानी की आत्मा बनकर साथ चलता है। जब उसकी रूहानी धुनें बजती हैं, तो वे सिनेमा हॉल के अंधेरे में बैठे इंसान को उसकी अपनी ही किसी पुरानी याद, किसी छूटे हुए हमसफर या किसी अनकहे दर्द से जोड़ देती हैं। ठीक इसी तरह 'बंटवारा' में रुलाई और खामोशी का जो मर्मस्पर्शी संतुलन है, वह बनावटी ड्रामे के बिना भी आंखों को नम कर देता है।

सार्थकता की असली कसौटी

- किसी भी कलाकृति की वास्तविक सार्थकता इस बात से तय नहीं होनी चाहिए कि उसने रिलीज के पहले तीन दिनों में कितने करोड़ बटोरे। बॉक्स ऑफिस के आंकड़े आते-जाते रहते हैं और वे केवल वित्तीय खातों के बहिखाते का हिस्सा बनकर सिमट जाते हैं। संस्कृति और स्मृतियों में केवल वही कहानियां अमर होती हैं जो इंसान के दिलों में आशियाना बना पाती हैं।
- 'आवारापन 2' और 'बंटवारा 1947' जैसी फिल्में इसी कसौटी पर खरी उतरने की ईमानदार कोशिश करती हैं। वे दर्शकों को केवल टिकट खरीदने वाला ग्राहक नहीं मानतीं, बल्कि उन्हें एक जिंदादिल और संवेदनशील इंसान समझकर उनसे बात करती हैं। जब सिनेमा स्क्रीन के पार जाकर सीधे दर्शक के दिल की धड़कन से तालमेल बिठाने लगे, तभी उसकी असली यात्रा शुरू होती है। यह कोशिश व्यावसायिकता के इस दौर में एक सुखद अहसास की तरह है, जो हमें याद दिलाती है कि फिल्में करोड़ों के तमाशे से नहीं, बल्कि इंसानी जज्बातों की गहराई से जिंदा रहती हैं।

तड़क-भड़क बनाम सच्चा अहसास

दर्शक अब उस दौर से बहुत आगे निकल चुका है जहां सिर्फ खूबसूरत वादियों और महंगे परिधानों के दम पर उसका दिल बहलाया जा सकता था। आज का इंसान अपनी जटिल दिनचर्या, मानसिक तनाव और भागदौड़ भरी जिंदगी से निकलकर जब थियेटर के अंधेरे में बैठता है, तो वह एक सच्चा भावनात्मक अनुभव तलाशता है। वह चाहता है कि कोई कहानी उसके दिल को छुए, कोई किरदार उसे यह भरोसा दिलाए कि तमाम गलतियों के बाद भी इंसानियत की गुंजाइश बाकी रहती है और कोई दृश्य उसे यह सोचने पर विवश करे कि नफरत की आग में झुलसकर हमने आखिर पाया क्या है। 'आवारापन 2' जहां व्यक्तिगत स्तर पर पश्चाताप और आत्म-बलिदान के गहरे फलसफे को टटोलती है, वहीं 'बंटवारा 1947' सामूहिक चेतना पर लगे उन पुराने घावों को सहलाती है जो दशकों बाद भी पूरी तरह भरे नहीं हैं।

सिनेमा को समाज का आईना यूं ही नहीं कहा गया, लेकिन जब यह आईना सिर्फ फिल्टर लगाकर मनभावन तस्वीरें दिखाने लगे, तो समाज अपनी असली हकीकत भूलने लगता है। इन फिल्मों का अलग हटकर होना इसी बात में है कि इन्होंने सारे फिल्टर हटाकर इंसानी मन की सिलवटों और आंसुओं को दिखाने का साहस किया है। यहां सही और गलत के बीच कोई सीधी लकीर नहीं खींची गई, बल्कि यह दिखाया गया है कि हालात कैसे एक भले इंसान को भटका सकते हैं और कैसे एक भटका हुआ इंसान भी अपनी सोई हुई अंतरात्मा को जगा सकता है। इतिहास की भूलों से सीख लेकर वर्तमान के रिश्तों को संवारने का यह पैगाम बिना किसी भारी-भरकम उपदेश के चुपचाप दर्शक के भीतर घर कर जाता है।

फ्रांस में भारत का शिखर

डॉ. ज्ञानानंददास स्वामी
सहायक निदेशक, बीएपीएस
स्वामीनारायण अनुसंधान संस्थान,
अक्षरधाम, नई दिल्ली

पेरिस के बुसी-सेंट-जॉर्जेस में बना पारंपरिक हिन्दू मंदिर केवल भारतीय स्थापत्य का अद्भुत नमूना नहीं, बल्कि भारत और फ्रांस की दो सुंदर सांस्कृतिक धाराओं के मिलन का जीवंत प्रतीक है।

7 जुलाई, 1970 का वह दिन था। लंदन से मुंबई की ओर जा रहा एक विमान कुछ समय के लिए पेरिस के ओरली एयरपोर्ट पर रुका। यात्रियों के लिए यह शायद यात्रा का एक सामान्य पड़ाव था। परंतु उस समय किसी को क्या पता था कि इसी छोटे-से ठहराव में इतिहास का एक अदृश्य बीज बोया जा रहा है।

उस विमान में विराजमान थे स्वामी योगीजी महाराज, जो लंदन में हिन्दू मंदिर की प्रतिष्ठा कर भारत लौट रहे थे। तभी इस दूरदर्शी गुरु ने अपने दो शिष्यों, प्रमुख स्वामी महाराज और महंत स्वामी महाराज से विमान से नीचे उतरने का आग्रह किया। इस तरह स्वामिनारायण परंपरा के दोनों संत हाथों में स्वामिनारायण भगवान की चल मूर्ति लेकर पहली बार फ्रांस की धरती पर उतरे। दोनों शिष्य गुरु की आज्ञा के अनुसार नीचे गए, ठहरकर प्रार्थना की और वापस विमान में आए।

अब गुरु योगीजी महाराज ने अपना संकल्प व्यक्त किया, 'एक दिन पेरिस में एक सुंदर मंदिर बनेगा।' उस क्षण न मंदिर की भूमि थी, न निर्माण की योजना, न शिल्पकारों का समूह और न ही कोई स्थापत्य का नक्शा। था तो केवल एक संत का दिव्य संकल्प और भगवान पर अटूट विश्वास। समय बीतता गया। वर्ष दशकों में बदल गए। लेकिन आज वह दिव्य संकल्प काल के आवरण को चीरकर फ्रांस की धरती पर अमिट शिलालेख बनकर तैयार खड़ा है।

इस पारंपरिक पाषाण निर्मित मंदिर की विशेषता यह है कि यह उपासना स्थल होने के साथ-साथ भारतीय संस्कृति, कला, शिक्षा और संवाद का समग्र केंद्र है। पेरिस के पूर्वी उपनगर बुसी-सेंट-जॉर्जेस में लगभग 5,000 वर्गमीटर में फैले इस परिसर में दो प्रमुख आयाम हैं। ऊपरी तल पर पारंपरिक मंदिर और उसके आधार में हवेली के रूप में सांस्कृतिक केंद्र।5 शिखर, 10 विशाल गुंबद, 20 बारीक कारीगरी से युक्त महाकाय स्तंभ, 120 गवाक्ष, 49 चरित्र शिल्प पैनल और 4 सुसज्जित छतरियां मंदिर की पारंपरिक भारतीय स्थापत्य पहचान को उजागर करते हैं। इसके अतिरिक्त गर्भगृह, प्रार्थना मंडप और सभामंडप इसकी गहरी आध्यात्मिक दृष्टि को उजागर करते हैं।

उल्लेखनीय है कि ग्रीस, भारत, इटली और वियतनाम से प्राप्त विभिन्न प्रकार के संगमरमर तथा भारत के ग्वालियर के बलुआ पत्थर का उपयोग इस निर्माण को वैश्विक सहयोग का स्वरूप देता है। भारत में कुशल शिल्पकारों ने अपने हाथों से इन पाषाण खंडों को तराशकर उनमें हिन्दू शास्त्रीय शिल्पों का अंकन किया है। ये तराशे गए पत्थर हमारी हजारों वर्ष पुरानी संस्कृति को फ्रांस में लेकर आए, जिन्हें आधुनिक फ्रांसीसी इंजीनियरिंग के साथ संयोजित किया गया।

प्राचीन मारू-गुर्जर शैली में बनी विशाल हवेली में सभागृह, कक्षाएं, प्रदर्शनी स्थल, खेलकक्ष, कार्यालय और बहुउद्देशीय सुविधाएं हैं। इस प्रकार यह पूरा परिसर एक साथ देवदर्शन, ज्ञान का केंद्र, संस्कृति का संग्रहालय और मानव-मिलन का स्थल बना है।

वस्तुतः यह परिसर Esplanade des Religions et des Cultures क्षेत्र में है, जहां विभिन्न धार्मिक परंपराओं के उपासना-स्थलों का साथ-साथ होना स्वयं परस्पर सम्मान और सह-अस्तित्व का सुंदर संदेश देता है।

आगामी 2 से 14 सितंबर तक आयोजित होने वाला 'फेस्टिवल ऑफ कल्चर' इसी व्यापक दृष्टि का उत्सव होगा। वैदिक महायज्ञ, पालखी यात्रा, सीन नदी पर जल यात्रा, पेरिस के प्रसिद्ध सीमाचिह्नों के निकट से गुजरने वाली नगरयात्रा और विविध सांस्कृतिक कार्यक्रम, ये सभी केवल उत्सव नहीं, बल्कि संस्कृतियों के मिलन के अवसर होंगे। 6 सितंबर को महंत स्वामी महाराज द्वारा मूर्तिप्रतिष्ठा और लोकार्पण विधि इस ऐतिहासिक यात्रा का एक चरम क्षण बनेगी, जिसमें विश्व के विभिन्न महाद्वीपों से श्रद्धालुओं की उपस्थिति इस मंदिर के वैश्विक स्वरूप को और सशक्त करेगी। आज जब दुनिया अनेक प्रकार की सीमाओं, संघर्षों और सांस्कृतिक असहिष्णुताओं से जूझ रही है, फ्रांस की धरती पर एक ऐसा सांस्कृतिक सीमाचिह्न आकार ले चुका है, जो दो महान सभ्यताओं, भारत और फ्रांस, की एकता का सजीव प्रतीक बनेगा। इस नवनिर्मित मंदिर के उत्तुंग शिखर से निकलता 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' का शाश्वत संदेश और फ्रांस के एफिल टावर से निकलता Fraternité यानी बंधुता का संदेश, मानो आज एक होकर मंगलमय विश्व की प्रेरणा दे रहे हैं। इस मंदिर के निर्माता महंत स्वामी महाराज भी कहते हैं, 'यह मंदिर किसी एक समुदाय की पहचान को स्थापित करने के लिए नहीं, बल्कि विविध पहचान के लोगों को परस्पर निकट लाने के लिए बना है। इस मंदिर का निर्माण अपने आप में एक महत्वपूर्ण संदेश है: हमारे अलग-अलग मार्ग हो सकते हैं, लेकिन सम्मान और सह-अस्तित्व की भूमि एक हो सकती है।'

इस मंदिर के निर्माण में संतों और स्वयंसेवकों का समर्पण अविस्मरणीय है। जी हां, किसी ने पत्थर तराशे, किसी ने व्यवस्था संभाली, किसी ने भोजन बनाया, पर सबने मिलकर अपने हृदय का एक अंश इस मंदिर में रख दिया। पेरिस में बना यह मंदिर केवल भारत की पहचान नहीं, बल्कि उस विश्वास का प्रतीक है कि जब संस्कृतियां एक-दूसरे का सम्मान करती हैं, तब सीमाएं मिटती हैं और मानवता का एक नया मंदिर निर्मित होता है।

ब्ल्यू सिटी सावन उत्सव में छाई सावन की मस्ती

डोली बनीं मिस सावन, प्रतिभा जैन ने जीता मिसेज सावन का खिताब

सूर्यनगरी जोधपुर में सावन की फुहारों के बीच आयोजित ब्ल्यू सिटी सावन उत्सव में महिलाओं ने उत्साह, उमंग और मनोरंजन का जमकर आनंद लिया। राजस्थान टुडे और चैनल 24 न्यूज की ओर से 23 अगस्त को एयरपोर्ट रोड स्थित रासो में आयोजित इस विशेष आयोजन में सावन की रंगत देखते ही बनी। लहरिया परिधानों में सजी-धजी महिलाओं ने अपनी खूबसूरती, प्रतिभा और आत्मविश्वास से कार्यक्रम में चार चांद लगा दिए।

सावन के रंग, संगीत, मस्ती और मनोरंजन से सराबोर इस उत्सव में महिलाओं के लिए मिस सावन, मिसेज सावन, डांसिंग क्वीन और म्यूजिकल चेयर सहित विभिन्न मनोरंजक प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। प्रतिभागियों ने पूरे उत्साह के साथ प्रतियोगिताओं में हिस्सा लिया और अपने हुनर का प्रदर्शन किया।

डांसिंग क्वीन के मुकाबले में सोनिया राठी ने शानदार प्रदर्शन करते हुए खिताब अपने नाम किया। दीपा फर्स्ट रनर-अप और नेहा सेकेंड रनर-अप रहीं। वहीं मिस सावन का खिताब डोली ने जीता। अभिलाषा फर्स्ट रनर-अप और सिमरन सेकेंड रनर-अप रहीं।

इसी क्रम में मिसेज सावन का ताज प्रतिभा जैन के सिर सजा। गरिमा रोहतगी फर्स्ट रनर-अप और सुमोना मंडल सेकेंड रनर-अप रहीं। प्रतियोगिताओं में प्रतिभागियों के बीच कड़ा मुकाबला देखने को मिला और विजेताओं का चयन निर्णायक मंडल ने किया।

कार्यक्रम में निर्णायक की भूमिका ममता माथुर और उषा गर्ग ने निभाई। आयोजन में पूर्व विधायक मनीषा पंवार, भाजपा महिला मोर्चा जिलाध्यक्ष कमलेश गोयल, समाजसेवी अनिता मेहता, निरूपा पटवा, गीता माछर, ममता सांखला और गनिता सोनी बतौर अतिथि मौजूद रहीं। अतिथियों का स्वागत मारवाड़ मीडिया प्लस की डायरेक्टर पूनम अस्थाना ने किया।

कार्यक्रम का संचालन एंकर शिल्पा नेगी ने किया। पूरे आयोजन के दौरान सावन के गीतों, नृत्य, प्रतियोगिताओं और मनोरंजक गतिविधियों ने माहौल को खुशनुमा बनाए रखा। ब्ल्यू सिटी सावन उत्सव महिलाओं के लिए महज एक प्रतियोगिता नहीं, बल्कि अपनी प्रतिभा, आत्मविश्वास और सखी-सहेलियों के साथ उत्सव मनाने का एक खूबसूरत मंच बनकर सामने आया।

सावन की पारंपरिक रंगत और आधुनिक अंदाज के इस संगम ने जोधपुर की महिलाओं को यादगार पल दिए और आयोजन की शाम लंबे समय तक उनकी स्मृतियों में बनी रहने वाली बन गई।

सावन उत्सव के आकर्षक नजारे

सितंबर 2026 में मेष, मिथुन, कर्क व तुला राशि वालों के लिए यह समय प्रभावशाली है। बाकी राशियों के लिए भी समय बुरा नहीं है, बस धैर्य, संयम और सही निर्णय की जरूरत रहेगी।

विपुल डोभाल, ज्योतिष, पीठाधीश्वर।
श्री शनिधाम आश्रम, विकासनगर देहरादून
ईमेल : vipravaani@gmail.com
मोबाइल : 9928424374

मेष

सितंबर का महीना मेष राशि वालों के लिए उन्नति और नई संभावनाओं का संकेत दे रहा है। कार्यक्षेत्र में आपकी सक्रियता बढ़ेगी और जो काम पिछले कुछ समय से अटके हुए थे, उनमें गति आएगी। नौकरी करने वालों को अधिकारियों का सहयोग मिल सकता है, जबकि व्यापारियों के लिए नए संपर्क लाभदायक सिद्ध होंगे। आर्थिक दृष्टि से महीने का दूसरा भाग अच्छा रहेगा। परिवार में किसी खास विषय पर आपकी सलाह मानी जाएगी। हालांकि क्रोध व जल्दबाजी से बचना अच्छा रहेगा। स्वास्थ्य सामान्य रहेगा, लेकिन तनाव को हावी न होने दें।

वृषभ

वृषभ राशि के लिए सितंबर धन, परिवार और स्थिरता के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण रहेगा। आर्थिक स्थिति में सुधार के अवसर मिलेंगे और आय के नए साधन बनने की संभावना है। नौकरी में परिवर्तन की इच्छा रखने वालों को अच्छा अवसर मिल सकता है। व्यापार में साझेदारी या पुराने संपर्कों से लाभ मिलेगा। पारिवारिक जीवन में सुख-शांति बनी रहेगी, हालांकि महीने के मध्य में स्वास्थ्य या खर्च को लेकर चिंता हो सकती है। प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने वाले विद्यार्थियों को मेहनत का परिणाम मिल सकता है।

मिथुन

मिथुन राशि के लिए सितंबर परिश्रम के बाद सफलता प्राप्त करने वाला महीना रहेगा। बुध की मजबूत स्थिति आपके ज्ञान, संवाद और निर्णय क्षमता को बढ़ाएगी। नौकरी में आपकी कार्यक्षमता की प्रशंसा होगी और नई जिम्मेदारी मिल सकती है। व्यापारियों के लिए मार्केटिंग, संचार, ऑनलाइन कार्य तथा नए संपर्क विशेष लाभकारी रहेंगे। आर्थिक स्थिति अच्छी रहेगी, लेकिन एक साथ पैसा लगाने से बचें। दांपत्य जीवन में मतभेद हो सकते हैं, इसलिए संवाद बनाए रखें। यात्रा के योग भी बन रहे हैं।

कर्क

कर्क राशि के लिए यह महीना प्रभावशाली कहा जा सकता है। गुरु का कर्क राशि में गोचर आत्मविश्वास और भाग्य को मजबूत कर रहा है। नौकरी में उन्नति और महत्वपूर्ण जिम्मेदारी मिलने के योग हैं। व्यापार में विस्तार की दिशा में सकारात्मक परिणाम मिल सकते हैं। पारिवारिक जीवन में सुख मिलेगा और घर से जुड़ा कोई शुभ समाचार मिल सकता है। धन की स्थिति मजबूत होगी, लेकिन भावनात्मक होकर बड़ा निवेश न करें। अंतिम सप्ताह में किसी पुराने कार्य के पूरा होने से मन प्रसन्न होगा।

सिंह

सिंह राशि वालों के लिए सितंबर का महीना मिश्रित लेकिन महत्वपूर्ण परिणाम देने वाला रहेगा। महीने के आरंभ में आत्मविश्वास बहुत रहेगा, लेकिन जल्दबाजी परेशानी पैदा कर सकती है। कार्यक्षेत्र में आपकी प्रतिष्ठा बनी रहेगी, परंतु किसी सहकर्मी के साथ अनावश्यक विवाद से बचें। आर्थिक स्थिति सामान्य से अच्छी रहेगी, लेकिन अचानक खर्च भी सामने आ सकते हैं। प्रेम संबंधों में स्पष्टता आवश्यक है। पारिवारिक मामलों में आपकी भूमिका महत्वपूर्ण रहेगी। आध्यात्मिक गतिविधियों में रुचि बढ़ सकती है।

कन्या

कन्या राशि वालों के लिए सितंबर इस वर्ष के बेहतर महीनों में से एक साबित हो सकता है। बुध की मजबूत स्थिति बुद्धि, व्यापार, शिक्षा और निर्णय क्षमता को विशेष बल देती है। नौकरी में प्रमोशन अथवा नई जिम्मेदारी की संभावना है। व्यापारियों को नए ग्राहक और नए व्यवसायिक अवसर मिल सकते हैं। आर्थिक स्थिति में सुधार व निवेश से लाभ मिल सकता है। विद्यार्थियों के लिए समय अनुकूल है। विवाह योग्य लोगों के लिए भी अच्छे प्रस्ताव आ सकते हैं। अत्यधिक सोचने और छोटी बातों पर चिंता करने से बचें।

तुला

तुला राशि के लिए सितंबर संबंधों, प्रतिष्ठा और आर्थिक अवसरों का महीना रहेगा। शुक्र का तुला राशि में आना आपके लिए विशेष शुभ संकेत माना जा सकता है। कार्यक्षेत्र में आपकी छवि बेहतर होगी और रचनात्मक क्षेत्र से जुड़े लोगों को विशेष लाभ मिल सकता है। व्यापार में नए समझौते हो सकते हैं। दांपत्य जीवन में मधुरता बढ़ेगी। आर्थिक स्थिति मजबूत होगी, लेकिन विलासिता की वस्तुओं पर खर्च से बचना चाहिए। कोई पुराना मित्र दोबारा आपके जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

वृश्चिक

वृश्चिक राशि वालों के लिए सितंबर मेहनत, संघर्ष और उपलब्धि का मिश्रण लेकर आएगा। नौकरी में अपने काम पर विशेष ध्यान देना होगा। वरिष्ठ अधिकारियों के साथ संबंध अच्छे रखें। व्यापार में धीरे-धीरे लाभ बढ़ेगा और पुराने अटके हुए भुगतान मिलने की संभावना है। अचानक यात्रा हो सकती है। पारिवारिक जीवन में किसी सदस्य को लेकर चिंता हो सकती है, लेकिन स्थिति नियंत्रण में रहेगी। प्रेम संबंधों में संदेह से बचें। स्वास्थ्य की दृष्टि से नींद और खान-पान पर ध्यान देना आवश्यक है।

धनु

धनु राशि वालों के लिए सितंबर भाग्य के खुलने का संकेत दे रहा है। उच्च शिक्षा, यात्रा, धार्मिक कार्य और दूर स्थान से जुड़े मामलों में सफलता मिल सकती है। नौकरी में परिवर्तन की इच्छा रखने वालों को अच्छा अवसर प्राप्त हो सकता है। व्यापारियों के लिए नए बाजार में प्रवेश करने का समय अनुकूल है। धन की स्थिति अच्छी रहेगी और किसी पुराने निवेश से लाभ मिल सकता है। परिवार में शुभ कार्य की चर्चा हो सकती है। विद्यार्थियों को अपनी मेहनत का अच्छा परिणाम मिलेगा।

मकर

मकर राशि वालों के लिए सितंबर जिम्मेदारियों के साथ उपलब्धियां लेकर आएगा। कार्यक्षेत्र में मेहनत अधिक करनी पड़ेगी, लेकिन उसका परिणाम भी मिलेगा। नौकरी में वरिष्ठ व्यक्ति आपके काम से प्रभावित हो सकते हैं। व्यापार में धीरे-धीरे विस्तार होगा। आर्थिक मामलों में सावधानी जरूरी है, विशेषकर उधार देने या बिना पूरी जानकारी के निवेश करने से बचें। परिवार में किसी पुराने विवाद को समाप्त करने का अवसर मिलेगा। स्वास्थ्य सामान्य रहेगा, लेकिन थकान और तनाव को नजरअंदाज न करें।

कुंभ

कुंभ राशि वालों के लिए सितंबर नए संपर्क, नई योजनाओं और अचानक मिलने वाले अवसरों का महीना है। कार्यक्षेत्र में कोई ऐसा अवसर आ सकता है जिसकी आपने उम्मीद नहीं की थी। व्यापारियों के लिए नेटवर्क और संपर्कों से लाभ होगा। आय के नए स्रोत बनने की संभावना है, लेकिन धन के साथ खर्च भी बढ़ सकता है। वैवाहिक जीवन में साथी का सहयोग मिलेगा। अविवाहित लोगों के लिए कोई अच्छा संबंध सामने आ सकता है। हालांकि मानसिक अस्थिरता और निर्णयों में बार-बार बदलाव से बचें।

मीन

मीन राशि वालों के लिए सितंबर आत्ममंथन के साथ आगे बढ़ने का महीना रहेगा। शनि का मीन राशि में गोचर आपको अनुशासन और धैर्य की सीख दे रहा है। नौकरी में जिम्मेदारियां बढ़ेंगी, लेकिन इन्हीं जिम्मेदारियों से भविष्य में लाभ मिलेगा। व्यापार में जल्दबाजी से निर्णय लेने के बजाय लंबी अवधि की योजना बनाएं। धन की स्थिति धीरे-धीरे मजबूत होगी। परिवार में आपकी आवश्यकता महसूस होगी। आध्यात्मिक और धार्मिक कार्यों में रुचि बढ़ेगी। महीने के अंतिम दिनों में कोई शुभ समाचार मिल सकता है।

राजस्थान टुडे आपकी पत्रिका, आपकी बात

मासिक समाचार पत्रिका के लिए सदस्यता प्रपत्र

नमस्कार, *हम आपको हमारी मासिक समाचार पत्रिका के साथ जोड़ने के लिए आमंत्रित करते हैं। हमारी पत्रिका में आपको देश और दुनिया की नवीनतम खबरें, विशेषज्ञों के लेख और विश्लेषण, और विशेष सामग्री मिलेगी।*

सदस्यता विवरण

- सदस्यता शुल्क: 1000 पोस्टल चार्ज सहित प्रति वर्ष (12 अंक)
- सदस्यता अवधि: 1 वर्ष (12 अंक)
- भुगतान विकल्प: ऑनलाइन UPI भुगतान

सदस्यता प्रपत्र

नाम : ______________________

पता : ______________________

शहर : ______________________

राज्य : ______________________

पिन कोड : ______________________

मोबाइल नंबर : ______________________

ईमेल आईडी : ______________________

भुगतान विवरण

ऑनलाइन भुगतान

UPI QR code

8107800000@pz

हमारा पता

राजस्थान टुडे

बी-4, एम आर हाईट्स,
भास्कर सर्कल, रातानाडा,
जोधपुर- 342011

संपर्क जानकारी

वाट्सएप नंबर: +91 8107800000

ईमेल: rajasthantoday@gmail.com

सदस्यता के लिए आवेदन करें: यदि आप हमारी मासिक समाचार पत्रिका के लिए सदस्यता लेना चाहते हैं, तो कृपया इस प्रपत्र को भरें और हमारे WhatsApp नंबर पर भेजें। हम आपको जल्द ही अपनी पत्रिका के साथ जोड़ देंगे।

धन्यवाद,
राजस्थान टुडे टीम

RNI No.- RAJHINDI/2020/11485

POSTAL REGN.- CUST. ID: 1740526987 / CONTRACT ID: 41955312 / BPC: JODHPUR 342001 / RNI: RAJHIN/2020/11458

AYUSHI
BUILDCON PVT. LTD.

AYUSHI
BUILDERS & DEVELOPERS

221-222, Shyam Nagar, Pal Link Road, Jodhpur - 342 003 (Raj.)
Tel. : 0291-2710071 Mobile : 94141 27593, 93147 11416
E-mail : mdsharma74@live.in